॥ राधास्वामी दयाल की दया राधास्वामी सहाय ॥

॥ जुगत प्रकाश राधास्वामी ॥

अभ्यास में विघ्न और उनके दूर करने का जतन।

१—कोई लोग भजन में रस न मिलने की शिकायत करते हैं या यह कि अंतर में उनको कुछ नहीं खुला। इस का सबब यह है कि या तो उनका मन वक़्त अभ्यास के संसारी चाहों या कामों की गुनावन या ख़याल में लगा रहता है या संसारी काम या उनकी गुनावन करके अभ्यास में बैठते हैं या उनको जो कुछ अंतर में सुनाई या दिखाई देता है उसकी उनको पहिचान और क़द्र नहीं है ॥

२—ज़ाहिर है कि जब कोई अभ्यास के वक़्त दुनिया के कामों का ख़याल या तरंग उठावेगा उस वक़्त उसके मन और सुरत की धार उसकी इन्द्री की तरफ़ जारी होगी। जो कि मन से एक वक़्त में एक ही काम हो सक्ता है और रस ऊपर यानी ऊंचे की धार में है तो भजन का रस मन को जब तक कि उसकी धार ऊपर के चेतन्य से चढ़कर न मिले क्योंकर आ सक्ता है ॥

जो कोई संसारी काम या उसका ख़याल करके अभ्यास में बैठता है तो मन और सुरत उसके कामना की धार से भीगे हुए हैं और उस वक्त उनका झुकाव और ख़याल नीचे की तरफ़ हो रहा है तो जब तक गहरा शौक़ और प्रेम अंग लेकर भजन में मुतवज्जह न होगा तब तक सुरत और मन निरमल होकर न लगेंगे और रस नहीं आवेगा। इस सूरत में मुनासिब है कि कोई चितावनी या बिरह या प्रेम के शब्द का बड़ी पोथी सारबचन नज़म से होशियारी से पाठ करे और अपने ख़याल को बदले तो अलबत्ता कुछ रस या आनंद अभ्यास में मिल सक्ता है॥

३–कोई २ शख्सों का यह हाल है कि जैसा कि उनको भेद स्थानों का मिला है जब अभ्यास में बैठते हैं तो चाहते हैं कि पहला मुक़ाम तो फ़ौरन ही खुल जावे और जो कुछ उसकी झलक दिखलाई देवे तो चाहते हैं कि बराबर उनके सामने खड़ी या क़ायम रहे और जो आवाज़ उनको पहले मुक़ाम की सुनाई देती है तो उसकी जैसा कि चाहिये क़दर नहीं करते इस सबब से अभ्यास रूखा और फीका मालूम होता है। तीसरे तिल या सहसदलकँवल का नज़र आना और उसका ठहरना आसान बात नहीं है क्योंकि यह मुक़ाम बैराट स्वरूप और ब्रह्म के हैं, ऐसी जल्दी इन मुक़ामों का देखना और ठहरना मुशकिल है लेकिन कभी २ उनके स्वरूप या झलक का दिखाई देना और आवाज़ घंटे की सुनाई देना यह भी बड़ा

भाग है। आहिस्ता २ आवाज़ भी साफ़ और नज़दीक मालूम होती जावेगी और कभी २ स्थान का स्वरूप भी दिखाई देगा ॥

४—प्रेम और प्रतीत के साथ अभ्यास करते रहना मुनासिब है और समझना चाहिये कि संत मत के अभ्यास का मतलब यह है कि सुरत और मन जो पिंड में बंधे हुए हैं ब्रह्मांड की तरफ़ और फिर उसके पार चढ़कर पहुँचें। जो कोई ध्यान में अपने मन और सुरत को पहले या दूसरे मुक़ाम पर जमावे और थोड़ी देर ठहरावे तो चाहे उसे कुछ नज़र आवे या नहीं सिमटाव और चढ़ाई का रस तो उसे ज़रूरही मिलेगा। इसी तरह जो ध्यान और भजन के वक्त़ अपने मन और सुरत को जोड़ेगा और जहाँ से कि आवाज़ आरही है वहाँ तक आहिस्ता २ पहुँचावेगा तो ज़रूर उसको आनन्द भजन का आवेगा इस वास्ते मुनासिब है कि ध्यान और भजन के वक्त़ दुनिया के ख़याल छोड़ करके अपने मन और सुरत को पहले स्थान पर जमावे और जो वह उतर आवें तो फिर वहाँ पहुँचा कर ठहरावे इसी तरह बारम्बार करता रहे तो थोड़ा बहुत शब्द भी सुनाई देगा और रूप भी दिखाई देगा और सिमटाव और चढ़ाई का जो आनंद है वह भी ज़रूर मिलेगा ॥

५—मगर इन सब कामों के करने के वास्ते शौक़ और तड़प यानी-बिरह और प्रेम थोड़ा बहुत ज़रूर

दरकार है। जो अभ्यास के वक़्त मन क़ाबू में न आवे तो मुनासिब है कि बड़ी पोथी में से कोई बिरह या प्रेम या चितावनी का शब्द जिसका दिल पर असर ज़ियादा होता होवे ग़ौर से पढ़कर भजन में बैठे तो मन की किसी क़दर हालत बदलेगी और भजन थोड़ा बहुत दुरुस्ती के साथ बनेगा ॥

६—और कभी २ अपने मन को इस क़दर समझौती देना चाहिये कि जब तू दुनिया के काम करता है तो परमार्थ का ख़याल नहीं करता और जब परमार्थ के काम करता है तो दुनिया के कामों का क्यों ख़याल करता है और जब तब सच्चे मालिक के चरनों में प्रार्थना करता रहे कि मन निरमल और निश्चल होकर भजन में लगे। ज़रा ग़ौर करने से मालूम होगा कि भजन और ध्यान के वक़्त दुनिया के ख़याल उठाने में निहायत बेअदबी सच्चे मालिक के साथ होती है जैसे कि कोई अपने बाप या हाकिम के सामने जाकर दूसरों से बातें करे और उनका बचन न सुने और उनकी तरफ़ भी न देखे तो वह कैसे राज़ी होंगे इसी तरह मालिक भी राज़ी नहीं होता है और इसी सबब से अभ्यास में रस नहीं आता है। इस वास्ते मुनासिब है कि जो ज़ियादा न बने तो थोड़ा ही अभ्यास करे पर जहाँ तक मुमकिन होवे दुरुस्ती और तवज्जह के साथ करे ॥

७—जब कभी भजन या ध्यान के वक़्त देह सुस्त या

शिथिल होती हुई मालूम होवे या नींद आती मालूम पड़े तो उस वक्त अभ्यास को छोड़कर थोड़ी देर के वास्ते हाथ और पैर फैला देवे और जो ज़ियादा सुस्ती होवे तो उठकर दो चार क़दम टहले और फिर बैठकर अभ्यास करे ॥

८–जब भजन के वक्त ग़फ़लत या बेहोशी होती मालूम पड़े तो उस वक्त नाम का सुमिरन और स्वरूप का ध्यान दो चार मिनट के वास्ते करे और जो ग़फ़लत दूर न होवे तो जब तक होशियार न हो जावे तब तक यही अभ्यास करे ॥

९–जब कोई ख़राब तरंगें या दुनिया के ख़याल उठें तो नाम का सुमिरन और स्वरूप का ध्यान करके उनको हटाना चाहिये और जो ऐसे ख़याल दूर न होवें तो भजन को मुल्तवी करके थोड़ी देर के वास्ते सुमिरन और ध्यान का अभ्यास करे और जब वे ख़याल दूर हो जावें तब फिर भजन में बैठ जावे लेकिन जब मन ज़ियादा ज़ोर करे और सुमिरन और ध्यान में भी न लगने देवे तो उस वक्त भजन और ध्यान छोड़ देवे और दो एक शब्द का पाठ समझ २ कर करे यानी हर एक कड़ी को पाँच २ चार २ दफ़े पढ़े और उसका मतलब समझ कर अपने ऊपर घटावे और फिर अभ्यास में लगे और जो फिर भी मन रुजू न होवे और बेफ़ायदा तरंगें उठावे तो उठ खड़ा होवे और फिर दूसरे वक्त पर अभ्यास करे ॥

१०–मालूम होवे कि राधास्वामी दयाल की दया की धार हर वक़्त जारी है और जब तक अभ्यासी की सुरत और मन की धार उस धार के साथ न जुड़ेगी या उसको न छुएगी तब तक उस धार का असर प्रगट मालूम नहीं होगा और यह बात जब हासिल होगी जब कि मन और सुरत बिरह अंग या प्रेम अंग लेकर अभ्यास में लगेंगे या संसार की तरफ़ से किसी सबब से दुखी होकर और राधास्वामी दयाल की तरफ़ सच्चे मन से दया की चाहना करके या किसी वक़्त किसी तरह का सच्चा ख़ौफ़ दिल में होगा और उस वक़्त राधास्वामी की मदद सच्चे दिल से माँगने के वास्ते भजन में बैठेंगे। ऐसे वक़्त और हालत में कुछ न कुछ दया की परख ज़रूर होगी और थोड़ा बहुत रस और शांति ज़रूर आवेगी॥

११–मालूम होवे कि जिस रोज़ खाने पीने में कुछ ज़ियादती या बेतरतीबी हो जावेगी तो भी भजन का रस नहीं आवेगा और जो कोई बुरा काम किसी से बन पड़ेगा जिससे किसी के काम में नुक़सान पहुँचता हो या पहुँचनेवाला हो तो इस सबब से भी भजन में रस न आवेगा। ज़ियादा खाने से भजन के वक़्त धार ऊँची नहीं चढ़ती और पाप काम करने में सुरत और मन का झुकाव नीचे की तरफ़ रहता है इन दोनों बातों का अभ्यासी सतसंगी को ख़याल रखकर अपनी सम्हाल जैसे मुनासिब होवे करते रहना चाहिये॥

१२–जिस किसी का मन दुनिया के ख़ास कामों में या किसी ख़ास शख़्स के साथ ज़ियादा बँधा है या किसी के साथ उसकी सख़्त दुशमनी या ईर्षा है तो भी मालिक के चरनों का प्रेम उसके मन में बहुत हल्का रहेगा और इस सबब से अभ्यास में कम लगेगा और रस कम आवेगा ॥

१३–खुलासा यह है कि सच्चे सतसंगी को चाहिये कि जिस क़द्र बने हर रोज़ दुनिया की प्रीत मन से कम करता जावे और मालिक के चरनों में शौक़ और प्रेम बढ़ाता जावे तो जिस क़द्र मन दुनिया की मोहब्बत से ख़ाली होता जावेगा उसी क़द्र मालिक के चरनों में प्रीत बढ़ती जावेगी और उसी क़द्र भजन और ध्यान का रस बढ़ता जावेगा और दया अंतर में ज़ियादा मालूम होती जावेगी ।

१४–जो कोई अपने मन को भोगों की तरंगे उठाने और फिर उनमें बरतने से बिल्कुल नहीं रोकता है और चाहता है कि दया ऐसी होवे कि मन उसका बिल्कुल निर्मल हो जावे तो इस तौर से दया नहीं आती है । उसको चाहिये कि जहाँ तक उसका बस चले मन को रोके और जब कभी रोके से न रुक सके तो शरमावे और पछतावे और मनको डर दिखावे कि आइंदा बहुत दुख भोगने पड़ेंगे और जब तब प्रार्थना भी करता रहे तब शायद कुछ हालत मन की आहिस्ता २ बदले और ऐसे शख़्स को चाहिये

कि सिवाय शर्माने पछताने और प्रार्थना करने के जिस रोज़ यह चूके और भूले तो उस रोज़ जहाँ तक बने ड्यौढ़ा या दूना भजन सुमिरन और ध्यान करे इस से जो मलीनता कि भोगों में अंदाज़ से ज़ियादा बरतने के सबब से पैदा हुई है वह उसी दिन किसी क़द्र साफ़ और हलकी हो जावेगी ॥

१५—और मालूम होवे कि पाँचों दून काम क्रोध लोभ मोह अहंकार और दसों इन्द्रियाँ जिनका झुकाव संसार की तरफ़ हो रहा है यह सब परमारथ के बिरोधी हैं उनमें काम क्रोध और ज़बान और आँख और कान इंद्री जब मुनासिब और वाजिबी तौर से ज़ियादा संसार में बरताव करते हैं तब अभ्यास में ज़ियादा बिघ्न डालते हैं उनकी सम्हाल हर वक़्त मुनासिब तौर पर रखनी चाहिये ॥

(१)—काम के ज़ियादा और ग़ैरवाजिबी तौर के बरताव में सुरत और मन का नीचे को झुकाव और उतार होता है और इस सबब से अभ्यास में रस नहीं आवेगा ॥

(२)—क्रोध के वक़्त सुरत को धार देह में और बाहर देह के फैल कर बिखर जाती है और इस वजह से अभ्यास में रस नहीं मिलेगा ॥

(३)—आँख और कान इंद्री बहुत सी फ़ुज़ूल सूरतों और चीज़ों को देखकर और सुनकर अंतर में अभ्यास

के वक़्त उनके ख़याल पैदा करके हर्ज करती हैं और भजन का रस नहीं आने देती हैं ॥

(४)–ज़बान इंद्री बहुत चिकना चुपड़ा और मज़ेदार खाना मिक़दार से ज़ियादा खाकर और बेहूदा और फ़ुज़ूल गुफ़्तगू करके अभ्यास मैं सुस्ती और ग़फ़लत और नापाक ख़याल यानी मलीन तरंगें पैदा करती हैं इस वास्ते मुनासिब है कि जिस क़दर बन सके उस क़दर इनके बरताव मैं सम्हाल और होशियारी रखनी चाहिये नहीं तो अभ्यास मैं हमेशा ख़लल पैदा करते रहेंगे ॥

१६–जिस शख़्श के सच्चा शौक़ हिरदे मैं है और मालिक के चरनों मैं प्यार है उसको शब्द सुनाई दे सक्ता है और जो कि मालिक का मुक़ाम दूर है और उसका जल्दी दर्शन हासिल नहीं हो सक्ता इस वास्ते उसका जलवा कभी २ अभ्यासी को दिखलाई देना यह बहुत बड़ी बात है कि उसी को देख कर होश नहीं रहेगा और निहायत आनंद और रस प्राप्त होगा और फिर इसी तरह दिन २ रस और आनंद बढ़ता जावेगा और एक दिन काम पूरा बन जावेगा ॥

१७–जब अभ्यास मैं बैठे तो जो उस वक़्त बिरह या प्रेम अंग नहीं है तो अपनी कसरों के ऊपर ख़याल करके चित्त मैं दीनता लाकर प्रार्थना करता हुआ भजन करे तो ज़रूर थोड़ा बहुत मन स्थिर होकर रस पावेगा क्योंकि जब मन का अंग दीन हुआ

उसी वक़्त थोड़ा बहुत प्रेम अंग जागेगा और जब प्रार्थना का असर दिल पर हुआ उसी वक़्त प्यार अंग थोड़ा बहुत पैदा हो जावेगा तो उस तरफ़ से भी दया आवेगी ॥

१८–और मुनासिब है कि अपने मन की थोड़ी बहुत चौकीदारी करता रहे कि फ़ुज़ूल तरंगें न उठावे और जो उठें तो उनको जल्द हटाता रहे और जहाँ तक बन सके दूसरों की कसरों पर नज़र न डाले और किसी पर तान न लगावे हमेशा अपनी कसरों को देखता रहे और उनके दूर करने का जतन करता रहे।

१९–इस देह में दस इंद्री चार अंतःकरन और पाँच दूत यानी काम क्रोध लोभ मोह अहंकार की धारों ने बहुत भारी शोर डाल रक्खा है इनकी तरफ़ से तबीअत जब किसी क़दर हटे तब शब्द सुनाई दे। इस तरफ़ से तवज्जह को हटाना और उस तरफ़ को लाना इसको शौक़ कहते हैं जिस क़दर यह शौक़ बढ़ता जावेगा उसी क़दर शब्द साफ़ २ और ऊँचे देश का सुनाई देगा और आनंद बढ़ता जावेगा ॥

२०–यह सच है कि अंतर का मज़ा और रस सुरत शब्द योग के वसीले से ऐसी जल्दी नहीं मालूम होता जैसे कि बाहर के भोगों का रस फ़ौरन इंद्री के वसीले से मिलता है और सबब यह है कि इंद्रियों की काररवाई करते हुए जीव को जन्मान्‌जन्म और हाल

के जन्म मैं सालहासाल गुज़र गये हैं और अंतरमुख शब्द की कमाई हाल मैं शुरू की है फिर कैसे दोनौं अभ्यासैं का फल बराबर जल्द मिले। सिवाय इसके इस काम मैं यानी अभ्यास मैं बहुत थोड़ा वक़्त लगाया जाता है और उस मैं से भी बहुत सा वक़्त गुनावन यानी ख़यालात दुनियवी मैं गुज़र जाता है और थोड़े से थोड़ा वक़्त ख़ालिस अभ्यास मैं सर्फ़ होता है फिर क़िस तरह ऐसा जल्दी असर और फ़ायदा अंतरमुख कमाई का सही मालूम पड़े। शौक़ीन को इस वास्ते मुनासिब है कि जिस क़दर बन सके रोज़ाना अभ्यास जिस क़दर दुरुस्ती के साथ बने करता रहे और जो रस और आनद आला दरजे का अंतर मैं न मालूम पड़े तो अपनी हालत परख करके देखे कि अभ्यास से पहिले क़िस क़दर उसके मन का बंधन संसार और उसके पदार्थों मैं था और बाद गुज़रने कुछ अरसे के जैसे एक दो बरस के किस क़दर प्यार और भाव उसका दुनिया और उसके पदार्थौं मैं कम हुआ और क़िस क़दर प्रीत और प्रतीत उसकी सच्चे मालिक और गुरू के चरनौं मैं बढ़ी और किस क़दर उसका भजन और सतसंग मैं चाव और प्यार बढ़ा॥

२१–जो इस तरह अपनी हालत की परख करने से मालूम पड़े कि संसार और संसारियोँ की तरफ़ से तबीअत किसी क़दर दिन २ हटती जाती है और अंतर अभ्यास मैं और सतसंग और बानी के पाठ

में ˘. ादा लगती जाती है और इधर का रस ि. ादा आनद देता है और संसार के भोग दिन दिन किसी क़दर फीके लगते मालूम होते हैं. तो यही सबूत इस बात का है कि अंतर का रस भारी और पायदार है और भोगों का रस हलका और फीका और नाशमान है फिर मुनासिब है कि जिस क़दर बने इसी अभ्यास को आहिस्ता २ बढ़ाता जावे और संसार की मुहब्बत आहिस्ता २ कम करता जावे तो रफ़्तः २ एक दिन काम दुरुस्त बन जावेगा और इसी अभ्यास से एक दिन सच्ची मुक्ती और परम आनंद प्राप्त हो जावेगा ॥

२२—मालूम होवे कि ऊपर जो कुछ लिखा है यह सच्चे अभ्यासी का हाल है यानी जिसके दिल में निरमल चाह सच्चे मालिक के मिलने और अपने जीव के कल्याण करने की है और कोई दूसरी ख़ाहिश सिद्धी शक्ती की या मान बड़ाई हासिल करने की नहीं है और संसार के भोगों की फ़ुज़ूल चाह जिस ने सचौटी के साथ दूर करी है या कम करता जाता है उसी की हालत अभ्यास करके आहिस्ता २ बदलती जावेगी बुरे कामों से नफ़रत और नेक कामों में रग़बत होती जावेगी और उसको अभ्यास की हालत में यह भी मालूम हो जावेगा कि इसी जुगत की कमाई से तन मन और इंद्रियों से न्यारा होना मुमकिन है और वही जीव संतों के बचन को परीक्षा अपने अंतर में बख़ूबी करता जावेगा और दिन २

राधास्वामी दयाल की मेहर और दया से प्रीत और प्रतीत उनके चरनों में बढ़ाकर एक दिन अपना काम पूरा बना लेगा। और जो कोई अपने मन और इंद्रियों में आशक्त हैं और संसार के भोग और पदार्थों की चाह किसी क़दर ज़बर रखते हैं और उनको दूर या कम नहीं कर सक्ते उनकी हालत जल्द नहीं बदलेगी पर जो सतसंग और अभ्यास करते रहेंगे तो अव्वल उनके अंतर में सफ़ाई और फिर आहिस्ता २ चढ़ाई होती जावेगी और फिर हालत भी बदलती जावेगी ॥

२३–बाज़े सतसंगी ऐसा ख़याल करते हैं कि उनको किसी क़दर अरसे यानी दो चार बरस राधास्वामी मत में शामिल होकर थोड़ा बहुत अभ्यास करते गुज़र गये पर उनको अभी कुछ अन्तर में खुला नहीं या कुछ तरक़्क़ी अभ्यास की मालूम नहीं होती।

२४–जवाब इसका यह है कि यह ख़याल उन सतसंगियों का दुरुस्त नहीं है उनको अपनी हालत की परख नहीं है या वे अपने पिछले और हाल की हालत और तबीअत की जाँच नहीं करते, क्योंकि जो कोई सच्चे मन और सच्चे शौक़ के साथ राधास्वामी मत में दाख़िल होकर प्रेम के साथ थोड़ा बहुत अभ्यास दो मर्तबा हर रोज़ सुरत शब्द मारग और सुमिरन और ध्यान का कर रहा है तो मुमकिन नहीं है कि वह राधास्वामी दयाल की दया से ख़ाली रहे यानी

उसको थोड़ा बहुत रस और आनंद भजन और ध्यान का न आवे ॥

२५–रोशनी और माया के चमत्कारों का नजर आना यह भी एक क़िस्म की दया में दाख़िल है और उससे किसी क़दर तरक्क़ी अभ्यास की पाई जाती है पर अभ्यासी को मालूम होना चाहिये कि सफ़ेद रोशनी का चाँदनी के मुवाफ़िक़ खिले हुए नज़र आना या पाँच रंग की रोशनी जुदा २ दिखालाई देना, या सूरज और चाँद और तारों का नज़र आना तरक्क़ी का निशान है मगर जो मकानात या बाग़ात या सूरतें मर्द और औरत की नूरानी नज़र आवें इन में ज़ियादा मन लगाना या अटकाना नहीं चाहिये और न उनके बार २ नजर आने की ख़्वाहिश करना चाहिये क्योंकि यह कैफ़ियतें वक़्त गुजरने अभ्यासी के मन और सुरत के ख़ास २ मुक़ामों से ज़रूर दिखलाई पड़ेंगी और जल्द ग़ायब भी हो जावेंगी ॥

२६–असली तरक्क़ी का ख़ास निशान यह है कि अभ्यासी को भजन और ध्यान में थोड़ा बहुत रस और आनंद आवे यानी मन थोड़ा बहुत निश्चल होकर अभ्यास में लगे और शब्द पहिले मुक़ाम का दिन २ साफ़ और नज़दीक सुनाई देने लगे और वक़्त अभ्यास के मन और सुरत किसी क़दर रसीले होकर शिथिल होते जावें और कभी २ इस क़दर अंतर में लग जावें कि इस तरफ़ की ख़बर और सुध न रहे ॥

२७—ऐसी हालत बग़ैर मन और सुरत के सिमटाव के या थोड़ा बहुत ऊपर की तरफ़ चढ़ने और शब्द या स्वरूप से मिलने के नहीं हो सक्ती है फिर जिस किसी की ऐसी हालत रोज़मर्रः या कभी २ होती है तो समझना चाहिये कि उसको राधास्वामी दयाल जैसा २ उसकी चाल के मुवाफ़िक़ मुनासिब समझते हैं तरक्की देते जाते हैं यानी सिमटाव और चढ़ाई उसके मन और सुरत की करते जाते हैं और उसका नशा भी उसको अपनी दया से थोड़ा बहुत हज़म कराते जाते हैं नहीं तो इस क़दर रस पाकर बहुतेरे अभ्यासी मस्त होकर घरबार और कारोबार छोड़ने को तैयार हो जावें ॥

२८—जो किसी को अपने अभ्यास के समय ऊपर की लिखी हुई हालत की पहचान कम होती है तो सबब उसका यह है कि उस अभ्यासी को गुनावन यानी ख़यालात अक्सर भजन और ध्यान में सताते और विघन डालते रहते हैं इस वास्ते उसको चाहिये कि वह अपनी एक या दो बरस गुज़री हुई पहले की हालत तबीअत को साथ अपनी हाल की हालत के मुक़ाबला करे तो जो वह सच्चा सतसंगी और सच्चा अभ्यासी है तो उसको और उसके घर वालों को इस क़दर ज़रूर मालूम पड़ेगा कि पहले की निस्बत उसकी तबीअत संसारी लोगों के संग में और संसारी व्यौहार और कारोबार ग़ैरज़रूरी और ग़ैरमामूली में कम लगती है और दुनियवी

ख़यालात भी उसके दिन २ किसी क़दर कम होते जावेंगे और फ़ुज़ूल और ग़ैरवाजिब चाहें और तरंगें दुनिया के भोगों और मुआमलों की भी कम होती जावेंगी और सतसंग और बानी और बचन में और भी गुरू और साध और सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में प्रीत और प्रतीत पहिले से किसी क़दर ज़ियादा होती जावेगी ॥

२९–जो ऊपर की लिखी हुई हालत किसी अभ्यासी सतसंगी को एक या दो बरस के अभ्यास के बाद मालूम पड़े तो फिर इस से ज़ियादा और सबूत दया और तरक़्क़ी का क्या चाहिये। असल मतलब राधास्वमी मत और उसकी जुक्ती के अभ्यास का यह है कि दुनिया की मुहब्बत और चाह दिन २ कम होवे और मन और सुरत सिमटकर किसी क़दर ऊपर की तरफ़ चढ़ने लगें और अंतर में थोड़ा बहुत रस लेने लगें क्योंकि बग़ैर सिमटाव और चढ़ाई के हालत मन और इंद्रियों की कभी नहीं बदल सक्ती है ॥

३०–पर मालूम होवे कि कुल मालिक राधास्वामी दयाल अंतरजामी सब के हाल और ताक़त को ख़ूब जानते हैं और उसके गृहस्ती कारोबार और रोज़गार की सम्हाल के साथ जिस क़दर उसकी ताक़त हाज़मे की देखते हैं उसी क़दर उसके मन और सुरत का सिमटाव और चढ़ाई आहिस्ता २ करते जाते हैं। जो कोई जल्दी के वास्ते अर्ज़ या फ़रियाद करै और उस

जल्दी में उसके किसी कारोबार का हर्ज या जिस्मानी तकलीफ़ का अंदेशा है तो ऐसी अर्ज़ या फ़रियाद को फ़ौरन नहीं सुनते पर आहिस्ता २ मुनासिब वक़्त पर उसको बख़्शिश ज़रूर देवेंगे और उसके साथ ताक़त ह   ा की भी बख़्शेंगे एका एक दया होने में आदमी मस्त और बेहोश होकर और दुनिया के कारोबार और कुटुंब परिवार को बिलकुल छोड़ कर मजज़ूब फ़क़ीरों के मुवाफ़िक़ सरगरदाँ फिरता फिरेगा और अपनी आइंदा की तरक़्क़ी को आप बंद कर देगा क्योंकि ऐसी हालत में फिर दुरुस्ती से अभ्यास नहीं बन पड़ेगा और इस वास्ते तरक़्क़ी बंद हो जावेगी ॥

३१–बहुत से सतसंगियों को ख़बर भी नहीं है कि पहिला मुक़ाम किस क़दर दर्जा बुलंद रखता है यानी कुल बड़े मतों का यह पद सिद्धांत है और जहाँ से तीन लोक की रचना की काररवाई हो रही है और जहाँ पहुँच कर जोगी लय हो गये और इधर का होश उनको नहीं रहा अब बड़ी भारी दया राधास्वामी दयाल की है कि ऐसे रास्ते और ऐसी जुगती से अपने सच्चे परमार्थी जीवों को चलाते और चढ़ाते हैं कि जिस में उनके दुनिया के किसी कारोबार में हर्ज भी न होवे और परमार्थ में आला दर्जा सहज में बेमालूम हासिल होता जावे ॥

३२–अभ्यासी को बेफ़ायदा जल्दी इस काम में नहीं करना चाहिये और ग़ौर करना चाहिये कि दुनिया के

काम भी जैसे विद्या सीखना जल्दी के साथ दुरुस्त नहीं बनते इस मैं पंद्रह और अठारह बरस सहज मैं गुज़र जाते हैं जब कि विद्यार्थी कुल वक्त अपना इसी काम मैं लगाते हैं बल्कि घरबार और कुटुंब परिवार से भी जुदा होकर मदर्से मैं रहना क़बूल करते हैं। फिर यह भारी परमारथ का काम जब कि सिर्फ़ दो तीन या चार घंटे उसमैं दिक्क़त से लगाये जाते हैं और बाक़ी वक्त दुनिया के काम और दुनियादारोँ के संग मैं गुज़रता है किस तरह ऐसा ज़ल्दी बन सक्ता है। बड़ी दया राधास्वामी दयाल की समझना चाहिये कि वे ऐसी थोड़ी मिहनत पर भी अपनी दया करते हैं और सच्चे अभ्यासी को थोड़ा बहुत अतर मैं सहारा थोड़े दिनोँ मैं बख्शते हैं॥

३३–जो कोई सचौटी के साथ अपने मन और इंद्रियोँ को संसार के भोगोँ की तरफ़ से हटाना चाहता है और सच्चे मालिक के चरनोँ मैं प्रेम के साथ अपने सुरत और मन को जोड़ना चाहता है उसको चाहिये कि हमेशा अपने मन और उसकी तरंगोँ की चौकीदारी करें यानी नज़र करता रहे कि वह क्या क्या तरंग उठाता है जो तरंगैं संसारी फ़ुज़ूल हैं उनको रोके और जो परमार्थी तरंग उठैं उनको बढ़ावे और ताक़त देवे॥

३४–संसारी तरंगोँ का रोकना इस तरह पर हो सकता है कि जब इस क़िस्म की हिलोर मन मैं

उठती हुई मालूम पड़े उसी वक़्त मन और सुरत की तवज्जह को ऊपर की तरफ़ जैसा कि भेद स्थानों का संत मत के मुवाफ़िक़ समझाया गया है पहिले स्थान पर नाम के आसरे चाहे स्वरूप के आसरे और चाहे शब्द के आसरे लगावे और उसी जगह पर जमा देवे फ़ौरन उस धार का मुख जो इंद्रियों की तरफ़ जाने वाली थी ऊपर की तरफ जुड़ जावेगा और वह संसारी तरंग हट जावेगी या मिट जावेगी और अंतर में थोड़ा बहुत ऊँचे देश का रस मिलेगा ॥

३५–नाम के सुमिरन का रस और स्वरूप के ध्यान का रस जो ऊँचे स्थान पर आँखों के ऊपर किया जावे और शब्द का रस जो पहिले स्थान सहसदल-कँवल या दूसरे स्थान त्रिकुटी की धुन सुनकर प्राप्त होवे इस क़दर ताक़त रखता है कि मन की धार को अपनी तरफ़ थोड़ा बहुत खींच कर दूसरी तरफ़ से हटा लेगा और जो ज़ियादा रस मिलेगा तो वह धार उसी तरफ़ को रवाँ होकर उस स्थान पर ठहर जावेगी और थोड़ी देर खूब रस देवेगी। और जो तवज्जह किसी क़दर कम रही तो रस कम आवेगा फिर भी दूसरी यानी इंद्रियों और नीचे की तरफ़ उस धार की चाल बंद हो जावेगी या कम हो जावेगी कि उस तरफ़ कुछ कररवाई नहीं कर सकेगी ॥

३६–राधास्वामी मत के अभ्यासियों को मुनासिब है कि जब अभ्यास में बैठें उस वक़्त दुनिनया और

के पदार्थौं का ख़याल ज़रूर बंद करैं और चरनौं की तरफ़ रक्खैं तो कुछ ध्यान और भजन का रस आवेगा और नहीं तो गुनावन यानी ख़यालों मैं वक्त ख़र्च हो जावेगा और अभ्यास का फ़ायदा प्राप्त न होगा ॥

३७–जब भजन के वक्त कोई तरंग संसारी या भोगों की उठे तो अभ्यासी को चाहिये कि उसी वक्त को रोके और जो न रोकी जावे तो उसी वक्त गुरु स्वरूप या स्थानी स्वरूप का ध्यान शुरू कर देवे। इसका असर थोड़ा बहुत ज़रूर मन और इंद्रियों पर पहुँचेगा और उनका मुख स्वरूप या शब्द की तरफ़ आसानी से हो जावेगा। और जब गुनावन यानी ख़याल हट जावे तब थोड़ी देर बाद फिर भजन यानी आवाज़ के सुनने मैं लग जावे ॥

३८–जो ध्यान के वक्त भी गुनावन दूर न होवे यानी फिर २ वही ख़याल पैदा होवे तो मुनासिब है कि नाम का सुमिरन भी ध्यान के साथ करे और जो फिर भी न हो तो जिस शब्द की कोई ख़ास कड़ी या कड़ियाँ प्रेम की मन को बहुत प्यारी लगती होवैं उनका अंतर मैं ही मन मैं गाकर पाठ करे और अपनी तवज्जह स्वरूप के ख़याल पर पहिले स्थान सहसदलकँवल पर जमाये रक्खे। जब मन इस काम मैं लग जावेगा तब गुनावन और ख़याल को छोड़ देगा और मन मैं थोड़ा बहुत प्रेम ज़ाहिर

होगा और शब्द की भी आवाज़ उस वक्त साफ़ सुनाई देगी और अभ्यास का थोड़ा बहुत रस आवेगा ॥

३९–मन से एक वक्त में एकही काम हो सक्ता है इस वास्ते अभ्यासी को मुनासिब है कि जब भजन में न लगे तब उसको ध्यान में लगावे और जो ध्यान में भी अच्छी तरह न लगे और प्रेम की कड़ियाँ गाकर भी ख़याल को न छोड़े तो सिर्फ़ सुमिरन करे इस तरकीब से कि मुक़ाम नाफ़ या हिरदे से नाम की धुन अंदर ही अंदर या थोड़ी आवाज़ के साथ उठावे और हिरदे और कंठ चक्र के स्थान पर एक २ हि नाम का उच्चारण करता हुआ सहसदलकँवल के स्थान या त्रिकुटी में ठहरावे यानी धुन को ख़तम करे और फिर इसी तरह दूसरी दफ़ा नाम का उच्चारण नाफ़ से लेकर सहसदलकँवल तक करे यानी चार हिस्से करके एक २ हिस्सा नाम का उच्चारण एक २ चक्र के मुक़ाम पर करके अख़ीर हिस्सा सहसदलकँवल में ख़तम करे जैसा कि नीचे लिखा है–
नाफ़–हिरदय–कंठ–सहसदलकँवल, और जो हिरदय
रा – धा स्वा मी
चक्र से उठावे तो त्रिकुटी में ख़तम करे इस तरह–
हिरदय–कंठ–सहसदलकंवल–त्रिकुटी ॥
रा धा स्वा मी

४०–सिवाय ध्यान और भजन के वक्त के और किसी वक्त में जो हिलोर संसारी तरंग की उठे या

तरंग पैदा होवे और वह तरंग मुनासिब नहीं है या ग़ैरवाजिब और बेफ़ायदा है तो मुनासिब है कि उस वक़्त फ़ौरन गुरु स्वरूप या स्थानी स्वरूप का ख़याल करे और अंतर में तवज्जह अपनी ऊपर की तरफ़ यानी सहसदलकँवल या त्रिकुटी की तरफ़ फेरे तो उस वक़्त फ़ौरन वह हिलोर या तरंग बंद हो जावेगी पर शर्त यह है कि अभ्यासी का प्रेम थोड़ा बहुत गुरु स्वरूप में होवे या शब्द में होवे या अंतर में ऊँचे की तरफ़ तवज्जह फेरने में (कोई दिन के अभ्यास की आदत से) रस आता होवे ॥

४१–जि किसी का गुरु स्वरूप में प्यार और भाव कम है या नहीं है और न शब्द में अभी कुछ रस आया है तो उसको चाहिये कि जब कोई तरंग नाक़िस मन में उठे तो उसको अपने भजन और ध्यान की हानि और नरकौं और चौरासी के दुक्खौं का डर दिखला कर रोके। जो इस बात की संतौं के बचन के मुवाफ़िक़ थोड़ी बहुत परतीत है तो भी मन और इंद्री डर के सबब से रुक जावँगी और तरंग भी हट जावेगी ॥

४२--अभ्यासी को नामुनासिब है कि अपने मन और उसकी चाल की हर वक़्त निगरानी और चौकीदारी रक्खे कि फ़ुज़ूल और नामुनासिब जगह न जावे और न ऐसे कामौं का ख़याल उठावे तब जो अभ्यास ऊपर लिखा है उससे बन पड़ेगा और नहीं तो

उसको ख़बर भी न होगी कि उसके मन और इंद्री किन बातों और किन कामनाओं में भरम रहे हैं बल्कि वह उन बातों और कामनाओं का ख़याल के साथ अपने मन में रस लेवेगा और उस ख़याल को जब तक वह अंदर में जारी रहेगा और उसका पूरा रस नहीं लेवेगा नहीं छोड़ेगा यह हालत कुल संसारी जीवों की है और जो ऐसीही परमार्थी जीव की भी हुई तो उसमें अभी संसारी स्वभाव विशेष हैं, उसकी कार-रवाई परमार्थी दुरुस्त नहीं कही जा सक्ती है ॥

४३–परमारथ की तरक़्क़ी के वास्ते और अभ्यास में रस मिलने के लिये ज़रूर है कि अभ्यासी अपने मन और इंद्रियों की चाल पर नज़र रक्खे और जहाँ तक मुमकिन होवे उनको बाहर की तरफ़ फ़ुज़ूल और नामुनासिब धार बहाने से रोकता रहे और जिस क़दर बने अंतर में ऊँचे की तरफ़ चलने और चढ़ने की आदत डाले तो कोई दिन के अभ्यास से यह आदत पक्की और मज़बूत होती जावेगी। क्योंकि इंद्रियों की तरफ़ और संसार में भी सुरत और मन आदत और अभ्यास करके लगे हैं और जब दूसरी आदत डाली जावेगी और उसका अभ्यास किया जावेगा तब इनका मुख ऊपर की तरफ़ आहिस्ता २ बदल जावेगा और परमार्थ की तरक़्क़ी मालूम होने लगेगी ॥

४४–जो लोग कि राधास्वामी मत में शामिल होकर

सुमिरन और ध्यान और सुरत शब्द का अभ्यास हर रोज़ नेम से करते हैं । कभी ध्यान में स्वरूप का रस और भजन में शब्द का आनंद बराबर अरसे तक आता है और तबीयत मगन और खुश रहती है और कभी ऐसा होता है कि शब्द साफ़ नहीं मालूम होता है और न उसमें लगता है या ध्यान में कुछ रस नहीं आता या कम आता है तो ऐसी हालत में लोग घबराकर शिकायत करने लगते हैं और अपने चित्त में दुखी या निरास हो जाते हैं और फिर अभ्यास में भी बहुत ढीले और सुस्त हो जाते हैं ॥

४५–अब मालूम होना चाहिये कि यह दोनों हालतें सच्चे अभ्यासी को मौज और दया से प्राप्त होती हैं पहली हालत में यानी जब कि ध्यान और भजन में रस और आनंद मिलता है ऐन दया और मेहर राधास्वामी दयाल की प्रगट नज़र आती है पर दूसरी हालत में जब कि ध्यान और भजन में रस और आनंद कम मिलता है या एक दो रोज़ नहीं मिलता है तब राधास्वामी दयाल की दया प्रगट नहीं मालूम होती और इस सबब से मन घबरा जाता है और ख़याल करता है कि दया खिंच गई या किसी सबब से नाराज़गी हो गई कि जो आनंद मिलता था वह जाता रहा या बन्द हो गया ॥

४६–अब सम ा चाहिये कि दूसरी हालत में भी जिसका ज़िकर ऊपर हुआ दया संग है–यानी ध्यान

और भजन के रस न मिलने या कम होने के तीन सवब हो सक्ते हैं और वह यह हैं और उनका उपाव और जतन भी संग २ लिखा जाता है ॥

सवब का वयान ।

(१) यह कि इत्तिफ़ाक़ से किसी निपट संसारी या निंदकों का संग होना और उनके वचन तान और हँसी और परमार्थ के विरोधी या राधास्वामी मत की निन्दा के सुनकर मन में भरम या रूखा और फीकापन आ गया और अभ्यास के वक़्त वेही बचन याद आये और उनका असर ऐसा हुआ कि उस वक्त बिरह और प्रेम सूख गया और जब ऐसा हुआ उसी वक़्त मन और सुरत गिर पड़े और रस जाता रहा ॥

जतन या इलाज अभ्यासी के हाथ से ।

सवव इसका यह है कि अभी भक्ती ज़रा कच्ची है और सतसंग के वचनों की याद और उनकी स भी कम है नहीं तो चाहिये था कि संसारी और निंदकों के वचन का फ़ौरन काटने वाला जवाब देकर उनको चुप कर देता और जो उन लोगों के सामने बोलने का मौक़ा नहीं था या उनको जवाब देना मुनासिब न समझा गया तो चाहिये था कि सतसंग के वचन और परमार्थ में भक्ती की रीति विचार कर उन बातों के असर को अपने दिल से दूर कर देता और कहनेवालों को नादान और बिरोधी

और अभागी समझता और अपने भागों को सराह कर ज़ियादा तवज्जह से अभ्यास में लगता ॥

इलाज दूसरे के हाथ से या पोथी के पाठ से।

जो इस क़दर अपने में ताक़त नहीं पाई गई तो अभ्यासी को मुनासिब है कि इसी क़िसम के वचन पोथी सारबचन नसर और नज़म और प्रेमबानी और प्रेमपत्र में से निकाल कर ग़ौर के साथ पढ़े या अपना हाल किसी अपने से बड़े या बराबर के सतसंगी के सामने ज़ाहिर करके उससे अपनी तबीअत का इलाज करावे यानी भरम और अनसमझता को दूर करावे–पोथियों और सतसंगी के बचनों से ज़रूर मदद मिलेगी और राधास्वामी दयाल की दया से वह भरम और नादानी जल्दी दूर हो जावेगी ॥

प्रार्थना करे राधास्वामी दयाल के चरनों में, और जो यह न बने तो भजन या ध्यान में ज़ोर लगावे और वास्ते प्राप्ती दया के प्रार्थना करे राधास्वामी दयाल अंतर में समझ और सहारा देवेंगे ॥

दया का वर्णन।

अब समझो कि ऐसे चक्कर के आने में भी दया है कि जो मन में कचाई और कसर गुप्त धरी हुई थी वह इस तौर पर प्रगट होकर उसका इलाज किया जाता है और फिर आइंदा को वह कचाई और कसर या तो बिल्कुल दूर हो जावेगी या बहुत कम हो जावेगी और उसका इलाज भी मालूम हो जावेगा

कि जब २ वह कसर प्रगट होवे तब बदस्तूर सतसंगी और पोथियों से मदद लेकर उसको काटे और दूर करे ॥

(२) यह कि सैर और तमाशा या धनवालों और हाकिमों के संग से कोई २ तरंग मन में संसार के भोगों या पदार्थों या बड़े उहदों या नामवरी के कामों की पैदा होवे और उन पदार्थों या भोगों के न मिलने या मुशकिल से मिलने के ख़याल से मन सुस्त और उदास हो जावे और ख़याल करे कि कुल मालिक राधास्वामी दयाल छिन में जो चाहें सो बख़्श देवें पर उसको क्यों नहीं देते या यह कि किसी रोज़ भोगों में मामूल और हद्द मुकर्रर: से ज़ियादा या नामुनासिब और बेजा बर्ताव हो जावे या ज़ियादा अभिलाषा और ख़ाहिश किसी क़िसम के भोगों की मन में औरों का हाल सुनकर या पढ़ कर पैदा होवे तो उस वक़्त भी मन सुस्त और दुखी हो जाता है और ख़याल करता है कि राधास्वामी दयाल उसके मन और इंद्रियों की पूरी सम्हाल क्यों नहीं करते और क्यों उसमें तरंगें उठने देते हैं या भोगों में क्यों उसको बर्तने देते हैं—और इस हालत में भजन और ध्यान का रस और आनंद बिल्कुल नहीं आता है और तबीअत परेशान हो जाती है ॥

जतन और इलाज अभ्यासी के हाथ से ।

ऐसी हालत में अभ्यासी को चाहिये कि संतों के

बचन निस्बत मन और माया और संसार के भोग बिलास के यानी चितावनी और मन के स्वभाव और चाल के शब्द या बचन को समझ २ कर पाठ करे और सतसंग के बचन याद कर के अपने मन को समझावे कि क्या फ़ुज़ूल और नामुनासिब चाहैं उठा कर और उनके पूरे होने की ख़ाहिश राधास्वामी दयाल से करके नाहक़ उनकी तरफ़ से रूखा और फीका और दुखी और उदास होता है और अपनी भक्ती और ध्यान और भजन के अभ्यास में बिघन डालता है क्योंकि संतों और महात्माओं ने पहले ही यह बात समझाई है कि सच्चे परमार्थी को मालिक से मालिक को ही माँगना चाहिये यानी वह कुल मालिक दातार है और सर्व भोग और पदार्थ और हुकूमत और नामवरी उसकी दात है सो दाता से दाता ही को माँगना चाहिये और दात नहीं माँगनी चाहिये क्योंकि जब दाता दयाल प्रसन्न होगा तब जो दात अपने सच्चे प्रेमी के वास्ते मुनासिब होगी आप देगा और जिस में उसके दुनिया या परमार्थ का ... सान नज़र आवे वह दात अपने प्यारे बच्चों को नहीं देगा। इस वास्ते ऐसी दात के न मिलने में कभी उदास या दुखी नहीं होना चाहिये॥

जतन या इलाज दूसरे के हाथ से।

जो बानी और बचन पढ़कर और इस तरह सोच और बिचार करके मन न माने और बार २ वही

चाह उठावे या भोगों में या उनके ख़याल में भरमाता रहे तो मुनासिब है कि सतगुरु या साधगुरु से और जो उन से मेला न हो सके तो प्रेमी सतसंगी से जो अपने से अभ्यास और भक्ती में ज़बर होवे अपना हाल खोलकर या इशारे में अर्ज़ करे और फिर जो बचन वे कहें चित्त देकर सुने और बिचारे कि तुच्छ और नाशमान भोग और पदार्थ के वास्ते अपने भजन और ध्यान के रस और आनन्द को क़ुरबान करना और अपनी सच्ची भक्ती में बिघन डालना और अपने प्यारे परम पिता राधास्वामी दयाल से विमुख होना कैसे भारी नुक़सान की बात है और सच्चे प्रेमियों और सतसंगियों की सभा में किस क़दर शरम से सिर झुकाना पड़ेगा और अपनी सुरत के कल्यान और फ़ायदे में आपही बिघन डालना किस क़दर पाप कमाना और अपने उद्धार में देरी करना है ॥

प्रार्थना चरनों में राधास्वामी दयाल के ।

ऐसी समझ लेकर उन नाक़िस और ओछे भोगों की बासना को जल्द दूर करके और अपनी ग़लती और चूक पर शरमाकर मुआफ़ी के वास्ते चरनों में प्रार्थना करे और सर्व अंग करके यानी पूरी तवज्जह के साथ अभ्यास में लगे तो राधास्वामी दयाल की दया से जल्द हालत बदल जावेगी और अंतर में मामूली रस और आनन्द बल्कि मामूल से ज़ियादा मिलेगा ॥

प्राप्ती दया की।

और इस तरह राधास्वामी दयाल के दया की परख होगी कि अपने प्यारे बच्चों की किस तरह सम्हाल करते हैं और उनको उनके मन की कसर और मलीनता दिखाकर उस बिकार को आहिस्ता २ निकालते जाते हैं और समझ बढ़ाकर और सफ़ाई और भक्ती की रीति सिखाकर अन्तर में रस और आनन्द बख़्शते हैं॥

(३) यह कि पिछले या इसी जनम के करमों के सबब से कोई बीमारी या और किसी क़िस्म की तकलीफ़ या उपाधी अभ्यासी को पैदा होवे या जो उस के कुटुंब और परिवार या ख़ास रिश्तेदारों में हैं उन की तबीअत अपने कर्मों के फल करके बीमार होवे या और कोई तकलीफ़ या उपाधी उनको आयद होवे और बसबब उनकी प्रीत और संग रहने के अभ्यासी के मन पर भी उस का असर पहुँचे यानी उसको चिंता या फ़िकर पैदा होवे और उस बीमारी या तकलीफ़ अपनी या अपने कुटुंबियों की चिंता के सबब से मन और सुरत ध्यान और भजन में अच्छी तरह नहीं लगैं तब मन घबराकर जल्दी पुकार चरनों में करता है और जो वह मंजूर हो गई और बीमारी और तकलीफ़ या उपाधी हट गई तो ख़ुश होकर शुकराना करता है और नहीं तो चित्त दुखी और उदास होकर राधास्वामी दयाल की तरफ़ से

रूखा और फीका हो ताजा है और कहता है कि क्यों नहीं जल्दी करम काट देते और इस क़दर सहायता क्यों नहीं करते कि जिस में तबीअत ज़ियादा न घबरावे और अभ्यास दुरुस्ती से बना जावे और जो अभी दया नहीं करते तो आइंदा करम कैसे काटे जावेंगे और दुक्खों से कैसे बचाव करेंगे ॥

जतन और इलाज अभ्यासी के हाथ से ।

ऐसी हालत में अभ्यासी को चाहिये कि धीरज के साथ जो तकलीफ़ होवे उस की बरदाश्त करे और जो हो सके तो सतसंग की हाज़िरी देवे और चित्त से बचन सुने और जो सतसंग प्राप्त न होवे तो जिस क़दर बन सके तवज्जह अपनी लेटे हुए भजन या ध्यान या सुमिरन में लगावे और जो इन कामों में मन न लगे यानी तकलीफ़ के सबब से यह अभ्यास न बन सके तो चित्त के साथ नाम की धुन आहिस्ता २ या थोड़ी आवाज़ के साथ बतौर कड़ी के उच्चारन करे इस तरह पर—राधास्वामी ३, राधास्वामी ३—या इस तौर पर—राधास्वामी सतगुरु दयाल, हे राधास्वामी सतगुरु दयाल। और जो धुन के साथ नाम का उच्चारण भी न कर सके तो पोथी का पाठ करे या दूसरे से पाठ कराकर तवज्जह के साथ अर्थों पर नज़र रखकर सुने इन में से जो अभ्यास थोड़ा बहुत बन आवेगा तो ज़रूर तकलीफ़ किसी क़दर कम हो जावेगी क्योंकि वह तकलीफ़ पिछले नाक़िस कर्मों के सबब से पैदा हुई है और अब जो

परमार्थी करतूत संतों के बचन के मुवाफ़िक़ की जावेगी तो उस का असर पिछले करम के फल को काट देगा ॥

दया और दुआ लेना और दवा करना ।

सिवाय इस के अभ्यासी को मुनासिब है कि संत सतगुरु राधास्वामी दयाल की दया लेवे और यह अभ्यास या सतसंग और प्रार्थना करके हासिल होगी ॥

और ग़रीब और मुहताज यानी भूखों की दुआ लेवे इस तौर पर कि अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ एक या दो या ज़ियादा सच्चे भूखे मर्द या औरत या लड़कों को तलाश करके उन को अपने सामने अच्छा खाना खिलावे जैसा वे खाते जावेंगे उसी क़दर खुश होकर दुआ देते जावेंगे उन की दुआ के असर से भी तक़-लीफ़ किसी क़दर दूर होजावेगी और खुशी और ताक़त प्राप्त होगी ॥

और डाक्टर या हकीम या वैद्य की दवा भी राधा-स्वामी दयाल की मेहर और दया के आसरे करे इस से भी बीमारी की तकलीफ़ दूर होगी या कम होती जावेगी ॥

राधास्वामी दयाल की दया का वर्णन ।

जो जीव सच्चे मन से परमपुरुष राधास्वामी दयाल की सरन में आये हैं उन को जब कभी ऐसी तकलीफ़ या सोच और फ़िक्र पैदा होता है उस में

भी राधास्वामी दयाल की दया संग होती है यानी जो तकलीफ़ पिछले कर्मों के सबब से आती है उस को वे-अपनी दया से सूली का काँटा और मन भर का सेर भर कर देते हैं और फिर उस हालत में भी रक्षा और सम्हाल अपने जीवों की करते हैं और उन के परमार्थ की तरक्क़ी मंज़ूर है यानी मेहर से ऐसे वक़्त पर भजन और ध्यान में ज़ियादा रस देते हैं कि जिस की मदद से वह तकलीफ़ बहुत कम मालूम होती है या बिल्कुल नहीं मालूम होती है बल्कि बाज़े वक़्त ऐसी हालत तकलीफ़ या बीमारी में इस क़दर रस और आनन्द अभ्यास में बख़्शते हैं कि बीमार अपनी बीमारी का जल्दी दूर होना पसंद नहीं करता है इस वास्ते इस बात का ख़याल राधास्वामी दयाल की सरनवाले जीवों को हमेशा रखना चाहिये कि उन के करम तो राधास्वामी दयाल सहज में काटते जाते हैं और जो उनके रिश्तेदारों के करम भोग से उन को फ़िकर और सोच पैदा होता है उस में भी मदद फ़र्माते हैं और जो किसी परमार्थी के रिश्तेदारों को उससे या उसको उनसे सच्ची प्रीत है तो उन के करमों के कटने में भी दया के साथ मदद होती है यानी उन को भी दुख कम होता है और उस दुख में भी अपने परमार्थी रिश्तेदार के दर्शन और वचन से किसी क़दर तकलीफ़ का घटाव

और ाव होता है और अंतर में ताक़त और सीत-लता प्राप्त होती है ॥

४७—अब समझना चाहिये कि यह हालत मन के खिलने और भिचने की सब अभ्यासियों पर दौरा के तौर पर आती रहती है और यह भी दया का निशान है कि जब २ भजन और ध्यान में बराबर रस मिलता जाता है तब मन मगन रहता है और जब रस में कुछ कमी हो जाती है या दुरुस्ती के साथ अभ्यास नहीं बन पड़ता है या किसी क़िस्म की तरंगें मन में पैदा होती हैं जो ज़ाहिरा बिघनकारक हैं तब मन में एक क़िस्म की बेकली और तड़प पैदा होती है और वास्ते प्राप्ती दया के वह अभ्यासी बिनती और प्रार्थना करता है तब फिर थोड़ा बहुत रस मिलना शुरू हो जाता है इसमें यह फ़ायदा है कि अभ्यासी के चित्त में हमेशा दीनता बनी रहती है और अपने हाल और मन की चाल को देखकर अपने अंतर में शरमाता और झुरता रहता है और अहंकार अपनी बड़ाई और अभ्यास की तरक़्क़ी का मन में नहीं आता और बिरह वास्ते प्राप्ती ज़ियादा रस और आनंद के जगती रहती है इसी से तरक़्क़ी अभ्यास की होती रहती है और जो एक सी हालत रही आवे तो मन अंतर में मगन होकर जिस दरजे तक कि पहुँचा है वहीं रहा आवेगा और आगे की चाल नहीं चलेगी यानी तरक़्क़ी नहीं होगी ॥

४८–बेकली और तड़प जिस क़दर कि रस मिला है उसको हज़म करनेवाली और आइंदा को ज़ियादा दया हासिल करानेवाली और आगे को रास्ता चलानेवाली है जो यह हालत न होवे तो उतने ही रस और आनद में मन को शांती आजावे और आगे की तरक्क़ी बंद हो जावे इस वास्ते ऐसी हालत में अभ्यासी को ज़ियादा घबराना या निरास होना नहीं चाहिये बल्कि ज़ियादा दया का उम्मेदवार होकर ऐसे वक्त़ में जिस क़द्र बने कोशिश और मिहनत वास्ते दुरुस्ती से करने भजन और ध्यान के करना चाहिये और मन की बेफ़ायदा और नामुनासिब तरंगों को रोकना और हटाना मुनासिब है ॥

४९–यह तरंगें भी थोड़ी बहुत ज़रूर उठेंगी क्योंकि अभ्यासी जिस क़द्र रास्ता तै करता है उसी क़द्र काल और माया से उसकी लड़ाई होती जाती है और यह दोनों नई २ तरंगें काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार की जिनकी जड़ असल में त्रिकुटी के मुक़ाम पर है उठाकर अभ्यासी को गिराना और उसका रास्ता रोकना चाहते हैं. इस वास्ते अभ्यासी को मुनासिब है कि सतगुरु राधास्वामी दयाल की दया का बल लेकर उन तरंगों को काटता और हटाता जावे और जो भूल चूक हो जावे या उन तरंगों के साथ लिपट कर गिर जावे या फिसल जावे तो उसका कुछ अंदेशा नहीं है । चाहिये कि फिर होशि-

यार होकर अपना काम मज़बूती और दुरुस्ती से करे जावे तो राधास्वामी दयाल की दया से आहिस्ता २ इन दोनों के बल को तोड़ता जावेगा और एक दिन उन पर फ़तह पावेगा ॥

५०–ऐसी हालत के पैदा करने और काल अंग की ताक़त दिखाने में यह मौज है कि अभ्यासी को मालूम हो जावे कि काल और उसके दूत किस क़दर बली हैं और राधास्वामी दयाल अपनी दया से किस किस जुगत से उनके बल और ताक़त को तुड़वाकर या ढीला करके अपने सच्चे प्रेमियों की चाल बढ़ाते जाते हैं और सफ़ाई मन और सुरत की कराकर ऊँचे देश के बास के लायक़ उनकी गढ़त कराकर बनाते जाते हैं ॥

५१–जो कोई सतगुरुस्वरूप को अगुआ करके चलेगा उसको इस क़िस्म के बिघन बहुत कम पेश आवेंगे फिर भी काल और माया थोड़ा बहुत अपना बल और ज़ोर दिखावेंगे और उस अभ्यासी से आप भी डरते रहेंगे फिर राधास्वामी दयाल की दया से सब बिघन आसानी से कटते और दूर होते जवेंगे और एक दिन रफ़ा २ वह अभ्यासी इनको जीत कर अपने निज देश में पहुँच जावेगा ॥

५२–जब भजन में शब्द की आवाज़ साफ़ न मालूम होवे या बिल्कुल न सुनाई देवे तब मुनासिब है कि उस वक़्त उसी आ से बैठे हुए ध्यान करे और

जो थोड़े अरसे में इस तौर से शब्द न सुनाई देवे या आवाज़ साफ़ न आवे तो ध्यान करके उठ खड़ा होवे और फिर दूसरे वक़्त भजन करे और जो फिर भी शब्द न मालूम होवे तो बदस्तूर ध्यान करे और इसी तौर से हर रोज़ अभ्यास करे जावे जब तक कि शब्द सुनाई न देवे तो दो चार रोज़ या एक हफ़्ते या दो हफ़्ते में राधास्वामी दयाल की दया से ज़रूर थोड़ी बहुत आवाज़ मालूम पड़ेगी ॥

५३—जब भजन में बैठे और गुनावन यानी ख़याலात पैदा होवें तो चाहिये कि उनको हटावे और दूर करे और जो ऐसा न कर सके तो मुनासिब है कि उस वक़्त सुमिरन और ध्यान उसी आसन से बैठे हुए करे। जो ध्यान में मन लग जावेगा तो ख़यालात दूर हो जावेंगे और जो मन फिर भी ख़यालात उठाता रहे तो भजन और ध्यान छोड़ कर नाम का सुमिरन धुन के साथ या उस क़ायदे से जैसा कि पहिले लिखा गया नाम के एक २ हिस्से को या पूरे २ नाम को एक २ स्थान पर मन ही मन में या थोड़ी आवाज़ के साथ एक या पौन घंटे सुरत और मन और दृष्टि को सहसदलकँवल के मुक़ाम पर जमा कर और आँखें बंद करके करे इस तौर से ज़रूर सुमिरन का रस आवेगा और मन निश्चल हो जावेगा। फिर इख़्तियार है कि चाहे ध्यान करे या भजन करे और जो शांती आ गई होवे और तबीअत ज़ियादा

अभ्यास को न चाहे या फ़ुरसत न होवे तो उठ खड़ा होवे ॥

५४—जब ध्यान और सुमिरन में बैठे और उस वक़्त मन न लगे और बेफ़ायदा दुनिया के ख़याल उठावें या काम क्रोध लोभ और मोह की तरंगें उठावे तो भी मुनासिब है कि नाम का सुमिरन धुन के साथ या एक २ हिस्से नाम को चाहे पूरे २ नाम को एक २ स्थान पर उस क़ायदे से जैसा पहिले लिखा गया बाहर या अंतर आवाज़ के साथ करे पौन घंटे या एक घंटे तक। इस में ज़रूर थोड़ा बहुत रस आवेगा और मन निश्चल हो जावेगा और कुछ प्रेम की हालत भी मालूम होवेगी उस वक़्त फिर चाहे ध्यान करे या इस क़दर काम करके उठ खड़ा होवे ॥

५५—जो मन अक्सर भजन और ध्यान में नहीं लगता है और गुनावन ज़ियादा उठाया करता है तो भी यही इलाज करना चाहिये यानी हफ़्ते दो हफ़्ते एक २ घंटे नाम की धुन का उच्चारण करे इस में सफ़ाई हासिल होगी और थोड़ा बहुत रस आवेगा और फिर ध्यान और भजन थोड़ी बहुत दुरुस्ती के साथ बन पड़ेगा और जब इन दोनों में रस आने लगे या मन थोड़ा बहुत ठहरने लगे तब नाम का सुमिरन धुन के साथ मौकूफ़ कर दे या हफ़्ते में एक या दो बार घंटे २ भर करता रहे ॥

५६-जब कि नाम के सुमिरन मैं मन लग जावे और उस वक़्त जो शब्द सुनाई देवे या रोशनी नज़र आवे या आनंद प्राप्त होवे उसको सच्चा संग शब्द या सतगुरु का समझना चाहिये क्योंकि यह सब रूप यानी आनंद रूप और शब्द स्वरूप और प्रकाशरूप सतगुरु के हैं और जानना चाहिये कि जब इन मैं से कोई भी हासिल हुआ तो ज़रूर सतगुरु और शब्द के साथ मेला हो गया और अभ्यास दुरुस्त बना ॥

५७-जब भजन के वक़्त आवाज़ बाईं तरफ़ से आवे तो चाहिये कि तवज्जह अपनी ऊपर की तरफ़ को लगावे और बायें कान का दबाव हलका करे या बिल्कुल न दबावे या अँगूठा कान मैं से निकाल लेवे तो आहिस्ता २ आवाज़ दोनों आँखों के मध्य मैं ऊपर की तरफ़ से आती मालूम होगी और फिर उसी मैं चित्त लगावे ॥

५८-जो फिर भी आवाज़ बाईं तरफ़ से बदस्तूर जारी रहे तो मुनासिब है कि उसी आसन से बैठे हुए सुमिरन और ध्यान करे और ऊपर की तरफ़ दूसरे या तीसरे स्थान पर मन और सुरत को जमावे तो उम्मेद होती है कि थोड़े अरसे मैं जो कोई ख़याल दुनिया के नहीं उठैंगे तो आवाज़ का घाट बदल जावेगा यानी ऊपर की तरफ़ से या दायें कान की तरफ़ से सुनाई देने लगेगी और चाहिये

कि बायें कान की तरफ़ से तवज्जह बिलकुल हटा लेवे ॥

५९—और जो इस तौर से अभ्यास करने पर भी आवाज़ का घाट या मुक़ाम न बदले तो बदस्तूर सुमिरन और ध्यान करके उठ खड़ा होवे और जब तक बाईं तरफ़ से आवाज़ आती रहे तब तक हर रोज़ यही अभ्यास सुमिरन और ध्यान का भजन के आसन से बैठ कर जारी रक्खे यक़ीन है कि राधास्वामी दयाल की दया से चन्द रोज़ में हालत बदल जावेगी यानी ऊपर की तरफ़ या दाईं तरफ़ से आवाज़ जारी हो जावेगी ॥

६०—जब कभी भजन के वक़्त पिंडलियों में और पैरों में पटकन यानी दर्द इस क़दर पैदा होवे कि [illegible]सी बैठ न सके तो चाहिये कि दोनों कुहनियाँ अपनी बैरागन लकड़ी पर या चारपाई पर जमाकर दोज़ानू यानी ऊँट की तरह पिंडलियों को दबा कर बैठे तो यक़ीन है कि पटकन यानी दर्द का असर [illegible] हो जावेगा और भजन और ध्यान में थोड़ा बहुत मन लगाकर रस पावेगा और जो इस तरह बैठने से भी आराम न मिले तो चाहिये कि उठ कर पाँच सात मिनिट टहले यानी चिहलक़दमी करे और जब दर्द दूर हो जावे तो फिर बदस्तूर अभ्यास करे और जो इस पर भी आराम से न बैठा जावे तो उस वक़्त भजन और ध्यान मौक़ूफ़ करके सिर्फ़ नाम

का सुमिरन धुन के साथ थोड़ी देर करके उठ खड़ा होवे और दूसरे वक़्त भजन और ध्यान करे ॥

६१—मालूम होवे कि यह दर्द पिंडलियों में इस सबब से पैदा होता है कि सुरत की धार का सिमटाव और खिंचाव ऊपर की तरफ़ होता है और जब इस तरह सुरत पिंडलियों में से खिंचती है तब रगें उसके वास्ते तड़पती हैं सो आहिस्ता २ उनको सुरत की धार के थोड़े बहुत खिंचाव की बरदाश्त होती जावेगी और तब दर्द भी कम होता जावेगा और कोई तकलीफ़ अभ्यास में नहीं मालूम होगी ॥

६२—कभी २ ऐसा होता है कि भजन का अभ्यास करते २ हाथ और पाँव और पिंडलियाँ और पैर सुन्न हो जाते हैं यानी किसी क़दर बेकार हो जाते हैं और कभी उँगलियाँ सुन्न होकर छुट जाती हैं तो इस बात का कुछ अंदेशा नहीं है उँगलियाँ छोड़कर जो भजन बना जाय तो जिस क़दर हो सके भजन करता रहे या जो आवाज़ न सुनाई देवे तो उस वक़्त ध्यान करता रहे और जब भजन कर चुके तब थोड़ी देर हाथ और पैर फैला के ख़ाली बैठे फिर उठकर थोड़ी देर टहले तो सब अंग बदस्तूर हो जावेंगे ॥

६३—हाथ पैर सुन्न हो जाने का सबब भी वही सुरत का खिंचाव है और यह निशान है कि भजन दुरुस्ती के साथ बन रहा है क्योंकि सच्चे भजन की महिमा

यही है कि मन और सुरत का सिमटाव और खिंचाव नीचे की तरफ़ से ऊपर को होता जावे ॥

६४-कभी भजन या ध्यान की हालत में नींद का सा ग़लबा मालूम होकर अभ्यासी बेख़बर हो जाता है इस बिघन का नाम लय है यह हालत नींद की जो पैदा होती है इसका नाम-तुंद्रा है जो कि जाग्रत और सोने के बीच की हालत है। शुरू अभ्यास में ऐसी हालत कभी २ किसी की होती है सो उसको मुनासिब है कि जब नींद यानी बेहोशी आती हुई मालूम होवे तो उसी वक़्त उठकर दस बीस क़दम टहले और जब सुस्ती दूर हो जावे तब फिर अभ्यास में बैठ जावे और जब कभी ज़ियादा सुस्ती मालूम होवे तब उठकर मुँह धोवे और फिर ास शुरू करे और जो ज़रूरत होवे तो भजन के वक़्त नाम का अंतरी सुमिरन भी करता जावे इस तरह थोड़े अरसे में यह बिघन दूर हो जावेगा ॥

६५-सिवाय लय के तीन बिघन और भी हैं जो अभ्यासी को दर्जे बदर्जे सताते हैं और उनके नाम यह हैं-बिक्षेप, कषाय, रसास्वाद, इनके अर्थ और दूर करने की तरकीब नीचे लिखी जाती है-

(१) बिक्षेप-भजन या ध्यान में एक दम चित्त के हट जाने या झटका लगने का नाम है जैसे क़िसी ने आकर आवाज़ देकर जगा दिया या बदन को हिला दिया या कोई मन की ज़बर तरंग ने यकायक उठ

कर भजन या ध्यान से अलहदा कर दिया या किसी क़िस्म का असर जैसा कीड़ा रेंगता है या कोई जान-वर जैसे चींटी वग़ैरह काटती है बदन पर मालूम होवे और अभ्यासी उसके दूर करने को भजन और ध्यान को एक दम छोड़ देवे। इसका जतन यह है कि अपने लोगों को समझा देवें कि वक़्त भजन और ध्यान के उसको कोई ज़ोर से न पुकारे और जो ख़ास ज़रूरत होवे तो आहिस्ता आवाज़ देवे या नरमी के साथ उसके पैरों को छू देवे तो अभ्यासी जाग पड़ेगा॥

और मन की तरंग के साथ जहाँ तक मुमकिन होवे शामिल होकर भजन से जुदा न होवे यानी ग़ाफ़िल न हो जावे। इस क़िस्म के बिघन कोई दिन अभ्यासी को पेश आते हैं फिर जिस क़द्र उसका अभ्यास पकता और बढ़ता जावेगा उसी क़द्र यह बिघन दूर होते जावेंगे यानी उनका असर अभ्यासी पर बहुत कम होवेगा॥

(२) कषाय—इससे यह मतलब है कि पिछले जन्मों के ख़याल भजन के वक़्त उठें कि जिनको अभ्यासी ने इस जन्म में न देखा है न सुना है। यह ख़याल गुनावन के तौर पर पैदा होते हैं और बग़ैर थोड़ी देर अपना भोग दिये दूर नहीं होते पर जो अभ्यासी बिरह और प्रेम अंग लेकर भजन करता है या गुरु स्वरूप को अगुआ करके अभ्यास करता है उसको

यह बिघन कम सतावेंगे इस वास्ते ... ासिब है कि जब ऐसे ख़याल स... आवें उस वक़्त भजन के साथ ध्यान शामिल करे तब कुछ अरसे में यह ख़याल दूर हो जावेंगे ॥

(३) रसास्वाद—इस से यह मतलब है कि अभ्यासी भजन के वक़्त थोड़ा रस पाकर मगन और तिरपत हो जावे और फिर ज़ियादा अभ्यास में उस से न बैठा जावे या किसी क़दर ग़फ़लत आजावे। इसके दूर करने का जतन यह है कि जब ऐसी हालत होवे तो पाँच चार मिनट के वास्ते भजन छोड़कर और हाथ पैर फैलाकर बैठ जावे या उठ कर दस बीस क़दम टहले तो आहिस्ता २ यह बिघन दूर हो जावेगा। और अगर ज़ियादा रस पाकर इस क़दर मस्त और मगन होजावे कि दो चार घंटे या ज़ियादा अरसे तक अभ्यास में न बैठ सके तो उस पोथी का पाठ करता रहे ॥

६६—कभी ऐसा होता है कि भजन के वक़्त अभ्यासी की आँखों में या माथे में दर्द होने लगता है तो ऐसे वक़्त चाहिये कि भजन और ध्यान छोड़ देवे फिर दूसरे वक़्त तीन चार घंटे बाद करे और जो मौक़ा होवे तो घंटे दो घंटे आराम कर लेवे इस से वह दर्द दूर हो जावेगा। यह दर्द इस सबब से पैदा होता है कि अभ्यासी ज़ोर देकर अपने मन और सुरत को ऊपर की तरफ़ खींचे या अपनी आँखों को

पुतलियों को ज़ोर से ऊपर की तरफ़ को ताने और . वे सो यह बात मुनासिब नहीं है अभ्यासी को चाहिये कि यह काम आहिस्तगी के साथ जिस क़दर कि बरदाश्त होती जावे करे और ज़ियादा ज़ोर न लगावे क्योंकि ज़ियादा ज़ोर लगाने में ख़ून ऊपर की तरफ़ चढ़ता है और रगों में मामूल से ज़ियादा भर कर दर्द पैदा करता है ॥

६७—जिस अभ्यासी को कि भजन और ध्यान में रस और आनंद उसकी चाह के मुवाफ़िक़ मिलता है और दिन २ बढ़ता जाता है उसको चाहिये कि अभ्यास में बैठे तब पहले इरादा करले कि मैं इस वक़्त एक घंटे या दो घंटे या तीन घंटे अभ्यास करूँगा और उसके पीछे उठकर फ़लाना काम करूँगा इस तरह उसके मन और सुरत मुक़र्रर किये हुए वक़्त पर उतर आवेंगे और उस वक़्त अभ्यास पूरा हो जावेगा ॥

६८—जिस अभ्यासी की ऐसी हालत होती है कि कभी शब्द प्रगट होता है और कोई दिन पीछे गुप्त हो जाता है और फिर थोड़े दिन पीछे सुनाई देने लगता है तो यह कसर उसके पिछले या हाल के करमों और ख़यालों की है या यह कि अभ्यासी दस्तूर के मुवाफ़िक़ रोज़मर्रा अभ्यास नहीं करता है यानी कभी २ छोड़ देता है ॥

६९—इसका इलाज यह है कि अभ्यासी अपने (१)

व्योहार और (२) खान पान और अपने (३) मन और इंद्रियों की चाल ढाल और अपने (४) समझ और ख़याल और अपनी (५) प्रीत और प्रतीत को ग़ौर करके देखे और जाँच करे कि उसमें किस क़द्र कसर है और अपने (६) संग कुसंग की भी एहतियात करे क्योंकि संसारी और निंदकों के संग से अभ्यास में बिघन पड़ता है और जो इन बातों में कसर और नुक़्स नज़र आवे तो उसको प्रेमी अभ्यासियों का सतसंग या बानी का ग़ौर से पाठ करके दूर करे और आइंदा को अपने व्योहार और बर्ताव और खान पान और चाल ढाल और ख़यालों को सम्हाले और राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रीत और प्रतीत को बढ़ावे और संशय और भरम को जिस क़द्र जल्दी बने अपने मन से निकाल देवे और कुछ वक़्त अभ्यास का भी बढ़ावे और जो भजन में रस न आवे तो ध्यान ज़ियादा करे और ध्यान में भी रस न आवे तो नाम का सुमिरन धुन के साथ करे तब आहिस्ता २ यह बिघन हट जावेगा और फिर बराबर भजन में शब्द सुनाई देने लगेगा और ध्यान में भी थोड़ा बहुत रस आवेगा ॥

७०—मालूम होवे कि हर एक अभ्यासी की हालत चाहे मर्द होवे या औरत मुवाफ़िक उसके (१) पिछले और हाल के करमों के और भी मुवाफ़िक़ उसके (२) शौक़ यानी बिरह और प्रेम के और भी मुवाफ़िक़

उसकी (३) प्रीत और प्रतीत के दरजे के जुदा २ हैं और उसी मुवाफ़िक़ उसको अभ्यास में रस मिलता है और मन भजन ध्यान और सुमिरन में लगता है इस वास्ते हर एक को चाहिये कि अपनी हालत की निरख परख करता रहे और जिस बात में कसर देखे उसके दूर करने के लिये सचौटी के साथ जतन करता रहे और दया और मेहर की प्राप्ती के वास्ते और कुसूरों की माफ़ी के लिये जब तब प्रार्थना भी करता रहे और आइँदा को जिस क़दर बने एहतियात और होशियारी भी करता रहे तो राधास्वामी दयाल की दया से वह कसरें आहिस्ता २ दूर होती जावेंगी और कुसूर भी कम बन पड़ेंगे और उसी क़दर अभ्यास में ठहराव और रस बढ़ता जावेगा और एक दिन सफ़ाई होकर निरमल आनंद प्राप्त होगा और अपनी तरक्क़ी दिन २ आप मालूम होती जावेगी ॥

७१–जो किसी को ध्यान में स्वरूप का दर्शन न होवे या कभी २ होवे तो इस से अपने मन में निरास न होवे या यह ख़याल न करे कि मेरे अभ्यास में भारी कसर है उसको चाहिये कि स्थान पर सुरत और मन को जमाकर स्वरूप का ख़याल करता रहे तो आहिस्ता २ मन और सुरत उस स्थान पर ठहरने लगेंगे और रस भी आवेगा। जो ठहराव नहीं होता या थोड़ा बहुत रस नहीं मिलता तो

जानना चाहिये कि शौक़ और प्रेम की कसर है क्योंकि जो स्वरूप में प्यार होगा तो ज़रूर मन और सुरत की धार उसका ख़याल करतेही स्थान की तरफ़ चढ़ेगी और ऊँचे चढ़ने में ज़रूर किसी क़दर आनंद मिलेगा इस वास्ते अभ्यासी को मुनासिब है कि और शौक़ के साथ ध्यान करे और जो प्रेम की कसर है तो सतगुरु राधास्वामी दयाल की महिमा और उनकी दया को याद करके थोड़ा बहुत पैदा करे इसी तरह करते २ ध्यान में रस मिलने गा और स्वरूप का दर्शन भी कभी २ अभ्यास के य होता रहेगा और नहीं तो कभी २ सुपने में ज़रूर दर्शन मिलेगा और उस दर्शन को सच्चा और असली और दया और मेहर का निशान समझना चाहिये। ऐसे दर्शन के मिलने से अभ्यासी की प्रीत और प्रतीत बढ़नी चाहिये॥

७२-अभ्यासी को चाहिये कि इसी तरह जैसा ऊपर लिखा है आहिस्ता २ अपना ध्यान बढ़ाता जावे। यानी एक अस्थान पर बरस दो बरस या कम और ज़ियादा अभ्यास करके इसी तरह पर दूसरे स्थान पर ध्यान लगावे और फिर इसी तरह स्थान २ पर ध्यान का अभ्यास करता हुआ दसवें द्वार या सत्तलोक तक अपनी सुरत को पहुँचाकर ठहरावे तो इस तरह इतने मुक़ाम तक जीते जी उसका रास्ता

साफ़ हो जावेगा और सुरत सूक्षम अंग से वहाँ पहुँचकर ऊँचे देश का रस और आनंद पावेगी ॥

७३—प्रेमी अभ्यासी जो चाहे तो शुरूही से एक २ स्थान पर थोड़ी २ देर अपने सुरत और मन को ठहराकर सत्तलोक तक बराबर हर रोज़ ध्यान कर सक्ता है और जब पोथी में से भेद और प्रेम के शब्दों का पाठ करे या सुने तो उस वक्त जैसे २ उन शब्दों में स्थानों का ज़िकर आता जावे उसी मुवाफ़िक़ स्थान २ पर अपने मन और सुरत से स्वरूप का ध्यान करे तो उसको पाठ का रस भी बहुत आवेगा और उसके ध्यान का अभ्यास भी हर एक स्थान पर जल्दी पकता और बढ़ता जावेगा यानी एक दम सत्तलोक तक के ध्यान का रास्ता जारी हो जावेगा और जो ध्यान के साथ (अभ्यास के समय) नाम का सुमिरन भी करता जावेगा तो और कोई ख़याल नहीं उठैंगे और अभ्यास में विघन नहीं डालैंगे। पर इस तरह का अभ्यास बग़ैर गहरे शौक़ और प्रेम के दुरुस्ती और आसानी से नहीं बन पड़ेगा ॥

७४—सुरत शब्द मारग के अभ्यासी को घबराहट के साथ जल्दी करना या निरास होकर अभ्यास छोड़ देना-किसी सूरत में मुनासिब नहीं है ॥

७५—जो लड़का कि मदरसे में पढ़ने को भेजा जाता है उसको फ़ौरन पढ़ने का रस नहीं आता है पर जो वह ख़ौफ़ और दबाव के साथ पढ़ना कुछ अरसे तक

जारी रखता है तो रफ़्ते २ उसको मज़ा आता जाता है और फिर इस क़दर शौक़ बढ़ जाता है कि जो कोई उसको रोके तो अपने काम को नहीं छोड़ता है बल्कि दिन २ उसको बढ़ाता जाता है इसी तरह परमार्थ में भी पहले ख़ौफ़ चौरासी और नरकों के और मरन और देह की तकलीफ़ों का और शौक़ अपने जीव के कल्यान और मालिक से मिलने का चाहिये जो यह शौक़ और ख़ौफ़ सच्चा होगा (चाहे शुरू में थोड़ा होवे) तो ज़रूर परमार्थी कारवाई यानी अभ्यास हर रोज़ बनता जावेगा और उस में थोड़ा बहुत रस भी आवेगा और जिस क़दर दुरुस्ती से अभ्यास बनेगा यानी दुनिया के ख़यालात छोड़कर मन और सुरत वक्त़ ध्यान के स्वरूप में और वक्त़ भजन के शब्द में लगेंगे उसी क़दर दिन दिन रस बढ़ता जावेगा और अभ्यास करने की आदत मज़बूत होती जावेगी ॥

७६-जैसे बरस छः महीने के बालक को किसी खाने पीने की चीज़ का स्वाद ख़ासकर मालूम नहीं होता है पर हर रोज़ या अकसर ख़ास चीज़ों के खाने से उसको उनके स्वाद की . र पड़ती जाती है और फिर स्वभाव और आदत के ा फ़िक़ उन्हीं चीज़ों का खाना उसको पसंद आता है इसी तरह शुरू अभ्यास में सब जीव बालकों के मुवाफ़िक़ अभ्यास के रस और आनंद का तमीज़ कम कर सक्ते हैं

और यहाँ का सबब यह है कि पुरानी आदत के मुवाफ़िक़ दुनिया के ख़यालात उनको घेरे रहते हैं पर जब कोई दिन इसी तरह अभ्यास जारी रक्खेंगे और दुनिया के ख़यालों को हटाते रहेंगे तो कुछ २ रस आने लगेगा और फिर आदत के मुवाफ़िक़ उनको बग़ैर हर रोज़ अभ्यास करने के कल नहीं पड़ेगी तो इस क़दर अरसे कि आदत मज़बूत और क़ा हो जावे हर एक परमार्थी को चाहे तेज़ या सुस्त शौक़वाला होवे अपना अभ्यास जारी रखना ज़रूर और मुनासिब है ॥

७७–मालूम होवे कि बिना सुरत और मन के अंतर मैं लगने और ठहरने के रस और आनंद नहीं आसक्ता है इस वास्ते परमार्थी अभ्यासी को मुनासिब है कि इस बात की होशियारी ज़ियादा रक्खै कि मन दुनिया की गुनावन और ख़यालों मैं न पड़ जावे नहीं तो अभ्यास का रस नहीं आवेगा ॥

७८–ग़ौर करने की बात है कि जब कोई शख़्स खाना खाता है और कई तरह की चीज़ैं खाने मैं मौजूद हैं उस वक़्त जो उसका मन किसी और फ़िक्र और ख़्याल मैं लग जावे तो किसी चीज़ का स्वाद उसको मालूम नहीं होता है यानी हर एक चीज़ को खाया भी और फिर ख़बर न पड़ी कि क्या चीज़ खाई और उसका कैसा स्वाद था, फिर परमार्थी संतों का जो निहायत नाज़ुक है बग़ैर

और सुरत के लगाये कैसे रसीला लग सक्ता है। जैसे कि खाते वक़्त हर एक चीज़ ज़बान से मिली पर तवज्जह दूसरी तरफ़ होने से स्वाद नहीं मालूम हुआ इसी तरह से अभ्यासी के मन और सुरत भी ाम के स्वरूप तक पहुँचे या शब्द की धार से भी थोड़े बहुत मिले पर तवज्जह दूसरी तरफ़ यानी दुनिया के ख़यालों में लगी होने से भजन और ध्यान का रस बिल्कुल नहीं मालूम हो सक्ता है इस वास्ते यह बात बहुत ज़रूर है कि तवज्जह की सम्हाल अभ्यास के . रक्खी जावे यानी स्वरूप और शब्द में ध्यान लगा रहे तो रस आवेगा नहीं तो ख़ाली उठना पड़ेगा और मन दुखी होवेगा॥

७९—बाज़े लोग जल्दबाज़ी करते हैं कि हमको द अभ्यास का रस आवे और नहीं तो निरास होकर मत पर या अभ्यास के फ़ायदे पर या पर तान मारते हैं और अपनी हालत और लियाक़त के दरजे की परख नहीं करते हैं और न अपनी र दूर करते हैं फिर कैसे रस आवे वे लोग यह चाहा करते हैं कि राधास्वामी दयाल अपनी से उ । कारज बनावें यानी उन के मन और इंद्रियों को मोड़कर परमार्थ में वें और अभ्यास के वक़्त उनके र में तरंगें न उठने देवें और अपनी मेहर और दया से आप उनको अंतर में रस देवें। लेकिन

जो जुगत कि उनको वास्ते हटाने विघनों और
ाने मन के बताई जाती है उसमें तवज्जह
करते हैं और उसका अमलदरामद भी दुरुस्ती से
नहीं करते फिर ऐसे लोगों की दुआ कैसे जल्द
मंजूर हो सक्ती है पर जो वे अभ्यास नेम से करते
जावेंगे और कुछ मन और इंद्रियों की भी सम्हाल
रक्खेंगे और जो नई जुगत उनको समझाई जावे
थोड़ी बहुत उसके मुवाफ़िक काररवाई करेंगे तो थोड़े
से में ज़रूर उनको भजन का रस मिलने लगेगा॥

८०–जो कोई परमार्थी अभ्यास के वक़्त तवज्जह
अपनी अंतर में ऊपर की तरफ़ जैसे कि संतों ने
फ़र्माया है स्वरूप में या शब्द में या किसी मुक़ाम
पर जमावेगा तो ज़रूर उस तरफ़ मन और सुरत
और दृष्टी की धार उठकर रवाँ होगी और जब तक
कि दूसरा ख़याल पैदा न होगा यानी दूसरी धार
जारी नहीं होगी तब तक उस धार का मुख ऊँचे
की तरफ़ अंतर में रहेगा और इस खिंचाव और
तनाव का ज़रूर थोड़ा बहुत रस आवेगा क्योंकि
ऊँचा देश बनिस्बत उस मुक़ाम के जहाँ कि त
में सुरत की बैठक है ज़ियादा रसीला और आनंद
का स्थान है॥

८१–इस वास्ते किसी अभ्यासी को किसी हालत में
निरास नहीं होना चाहिये बल्कि होशियारी के साथ
अभ्यास में मन और इंद्रियों को थोड़ा रोक

कर रखना चाहिये और जो कोई कसर होवे उस के दूर करने का जतन दरियाफ़्त करके उसके मुवाफ़िक काररवाई करना चाहिये थोड़े अरसे में हालत बदलनी शुरू होगी और जब मन और इंद्री थोड़े बहुत रस के आदी हो जावेंगे तब वे आपही अभ्यास के मुक़र्रर किये हुए वक्त पर उस तरफ़ को तवज्जह के साथ लगेंगे और सब बि आहिस्ता २ दूर होते जावेंगे और आनंद और रस मिलता जावेगा ॥

८२–अकसर अभ्यासी लोग शिकायत इस बात की करते हैं कि भजन में मन कम लगता है और गुनावन और ख़यालात तरह २ के बहुत उठा करते हैं। सबब इसका यह है कि मन अभी जैसा चाहिये साफ़ नहीं हुआ है यानी उस में दुनिया की ख़ाहिशें अनेक तरह के भोगों की धरी हुई हैं। जब भजन में बैठकर तवज्जह शब्द की धार की तरफ़ जो ऊपर से नीचे को उतरती है की जाती है उस वक्त जो ख़यालात या चाहें ज़बर हैं उन्हीं की गुनावन पैदा होती है और उस गुनावन के साथ सुरत की धार बजाय आवाज़ को प कर ऊपर की चढ़ने के तरंग के साथ नीचे को उतर आती है और उस ख़याल में इस क़दर लिपट जाती है कि यासी को अकसर ख़बर भी नहीं रहती कि मैं क्या कर रहा हूँ ॥

८३–इलाज का यह है कि सतसंग बेत करे

और बचनोँ को विचार कर सोचे और समझे और मन मेँ से फ़ुज़ूल ख़्वाहिशेँ भोग बिलास की घटाता और हटाता जावे और सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल के चरनोँ की प्रीत और प्रतीत दिन २ बढ़ाता जावे। जिस क़दर शौक़ तरक़्क़ी अभ्यास और प्राप्ती दर्शन का बढ़ता जावेगा और संसार और भोगोँ की तरफ़ से तबीअत किसी क़दर हटती जावेगी उसी क़दर सफ़ाई मन और सुरत की होती जावेगी और जब अभ्यास के माया और काल मन और सुरत को अपनी तरफ़ भोगोँ का ललचाव देकर खीँचेँगे तो निर्मल मन और निर्मल सुरत उस वक़्त होशियार होकर भोगोँ की तरंग और ख़यालोँ को हटा कर बदस्तूर अपनी तवज्जह शब्द की धुन मेँ रखकर चढ़ते रहेँगे॥

८४—जोकि ऐसी सफ़ाई के हासिल होने के लिये यानी मन से ख़्वाहिश भोगोँ की घटने या दूर होने के वास्ते निरन्तर यानी बराबर अभ्यास शौक़ के साथ कुछ अर्से तक करना ज़रूर है और फिर भी कोई न कोई इंद्री या पाँचोँ मेँ से कोई न कोई दूत थोड़ा बहुत ज़बर बना रहता है और ज़ोर उस का आहिस्ता २ बहुत देर मेँ घटता है इस वास्ते बेह-तर और मुनासिब मालूम होता है कि अभ्यासी ऐसी हालत मेँ कि जब भजन के वक़्त तरंगेँ काम क्रोध लोभ मोह और अहंकार वग़ैरह या किसी इंद्री के बिषय की ज़बर उठती होवेँ तब अभ्यासी ध्यान

पर ज़ियादा ज़ोर देवे यानी उस को ज़ियादा अर्से तक करे और न थोड़ी देर करे यानी जिस क़दर थोड़ी बहुत सफ़ाई के साथ बन पड़े उतना ही करे और बाक़ी वक़्त अपने अभ्यास का सुमिरन और में लगावे ॥

५८—भजन के अभ्यास में मन और सुरत को शब्द की धार के आसरे जो ऊपर से नीचे को आती है चढ़ाना पड़ता है और इस सबब से जब कोई तरंग उठती है और का रुख़ नीचे की तरफ़ को है तो शब्द की धार ज़बर तरंग के साथ मन और सुरत को नीचे की तरफ़ रुजू होने में मदद देती है और इस सबब से अभ्यासी को अपनी सम्हाल रखना कठिन हो जाता है ॥

८६—ले ध्यान के अभ्यास में जिस क़दर कि शौक़ और प्रेम है उसी मन और सुरत की धार हिरदे के मुक़ाम से उठकर अपने प्रीतम से मिलने या उसका दर्शन करने या उस के चरनों को स्पर्श करने के लिये ऊपर को उस म की तरफ़ जहाँ कि ध्यान जमाया गया है चढ़ती है इस हालत में दूसरी क़िस्म की तरंग का पैदा होना और नीचे की तरफ़ को उसका झुकाव बन नहीं सक्ता तक कि अभ्यासी आपही ध्यान को छोड़कर दूसरा ख़याल न उठावे और जो ऐसा करेगा तो उसका ध्यान और शौक़ प्रीतम से मिलने का ग़लत हो जावेगा ॥

८७–खुलासा यह कि भजन के समय जो कोई ज़बर ख़ाहिश मन में धरी हुई है उसको शब्द की धार जगा देती है और ध्यान के समय शौक़ और की धार जो अभ्यासी के हिरदे से उठती है वह और ख़ाहिशों की तरंग को नहीं उठने देती यानी दबाये और सुलाये रखती है और जिस क़दर कि प्रेम ज़ियादा होगा उसी क़दर और तरंगें ज़ईफ़ और - ज़ोर होती जावेंगी इस सबब से ध्यान में अभ्यासी को आसानी से काररवाई करने का मौक़ा मिलता है और भजन में बग़ैर तीव्र यानी ज़बर बैराग के भोगों की ज़बर ख़ाहिश का रोकना और हटाना मुशकिल हो जाता है ॥

८८–मतलब यह है कि ध्यान में अभ्यासी जिस क़दर कि प्रेम और शौक़ उसके दिल में है उसी से थोड़ी बहुत काररवाई बग़ैर मुक़ाबला बिरोधी ख़ाहिशों के कर सक्ता है और भजन में बिरोधी ख़ाहिशें जल्द जाग उठती हैं और ताक़त पैदा करके अभ्यासी के मन और सुरत की धार को जल्द नीचे को तरफ़ गिरा देती हैं ॥

८९–सबब इस का यह है कि शब्द ज़ियादा सफ़ाई चाहता है और जब तब कि अभ्यासी के मन और सुरत में भोगों की चाह की मलीनता धरी हुई है वह उसको फ़ौरन प्रगट करके मन और सुरत की मलीन

धार को नीचे को गिरा देता है यानी अपने सन्मुख से हटा देता है ॥

९०–और ध्यान मैं इस क़दर फ़ायदा है कि शौक़ और प्रेम की धार जो अभ्यासी के हिरदे से उठकर ऊपर को रवाँ होती है वह अभ्यासी के मन और सुरत की धार को जो प्रेम की धार के संग चलती है निर्मल और साफ़ करती हुई ऊपर की तरफ़ को खींचती है और स्वरूप उस प्रेम की धार को ताक़त देता है और मिलने के शौक़ को बढ़ाता जाता है और जिस क़दर कि वह प्रेम और शौक़ की धार र को चढ़ती जाती है उसी क़दर ऊँचे देश का रस और आनन्द मिलता जाता है और शांती और शीतलता आती जाती है कि जिसके सबब से मलीन ख़ाहिशैं कमज़ोर होती जाती हैं और अभ्यास दिन दिन बढ़ता जाता है यानी एक धाम से दूसरे और दूसरे से तीसरे और इसी तरह सत्तलोक तक ध्यान के वसीले से अभ्यासी अपनी सुरत की धार को गौन अंग करके पहुँचा सक्ता है ॥

९१–हरचंद कि ध्यान मैं किसी क़दर आसानी है पर जो शौक़ चढ़ाई का और स्वरूप मैं थोड़ा बहुत प्रेम नहीं है या सुरत और मन किसी क़दर ऊँचे चढ़कर रस और आनन्द नहीं लेते तो इस अभ्यास मैं भी गुनावन और ख़यालात तरह २ के उठते हैं और जब तक कि अभ्यासी के चित्त मैं किसी क़दर चा

वैराग दुनिया की तरफ़ से और सच्चा अनुराग सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल और सतगुरु के चरनौं मैं न होगा तब तक उसके सुरत और मन गुनावन और ख़याlात के संग लिपट कर नीचे उतर आवैंगे और ध्यान दुरुस्त नहीं बनेगा और न कुछ रस और आनंद आवेगा। इस वास्ते हर हालत मैं थोड़ा बहुत वैराग भोगौं से और अनुराग चरनौं मैं ज़रूर दरकार है तब अभ्यास दुरुस्त बन पड़ेगा और कुछ आनन्द भी प्राप्त होगा और तब अहिस्ता २ तरक्क़ी भी होती जावेगी और यह वैराग और अनुराग सतगुरु या साध के संग से आवेगा और साध से मुराद सच्चे और प्रेमी अभ्यासी से है॥

९२–ध्यान मैं इस क़दर आसानी है कि यह अभ्यास स्वरूप के आसरे किया जाता है और स्वरूप मैं प्रेम जल्द आ सक्ता है चाहे वह स्वरूप मुक़ामी है या गुरू का और ज़ाहिर है कि जिस स्वरूप या जिस चीज़ मैं प्यार होता है तो उसकी तरफ़ मन और सुरत की धार जल्द उठ कर रवाँ होती है और भजन मैं शब्द की धार को पकड़ के शब्दी की तरफ़ चलना बग़ैर सफ़ाई और गहरे प्रेम के मुश्किल है॥

९३–अंतरी यानी मुक़ामी स्वरूप का जब कभी मौज से अभ्यास के वक्त दर्शन हो जाता है तो फिर चाहे वह हर रोज़ प्रगट न होवे उसका ख़याल करके थोड़ा

बहुत प्यार हिरदे मैं पैदा हो ा है और गुरु स्वरूप का तो साक्षात् दर्शन बाहर होता है तो जो कोई का तसव्वुर यानी ध्यान अंतर मैं करे और वह ी २ प्रगट हो जावे तो उस मैं विशेष प्यार जल्द आ स है और जब कभी प्रगट न होवे तो का ख़याल करने से भी (अगर मन मैं सच्चा प्यार और भाव है) किसी क़दर प्रेम हिरदे मैं पैदा हो सक्ता है और मालूम होवे कि जो स्वरूप गुरू का अन्तर मैं प्रगट होता है वह हाड़ माँस का नहीं है बल्कि ऐन चेतन्य है क्योंकि चेतन्य मंडल मैं अँतरजामी पुरुष अपने प्रेमी और जन के निमित्त गुरु स्वरूप का आकार धारन करता है और वह चेतन्य आकारी स्वरूप बराबर ासी के अगुवा के तौर पर मदद देता जावेगा और जिस क़दर कि अभ्यासी ऊँचे मुक़ाम पर अभ्यास करेगा उसी क़दर वह स्वरूप भी ऊँचे देश मैं ज़ियादा निर्मल यानी सूक्ष्म और लतीफ़ और ज़ियादा नूरानी होता जावेगा ॥

९४–खुलासा यह कि गुरू का आकारी प अभ्यासी के संग बराबर सत्तलोक तक रहेगा और रास्ते मैं मन और सुरत के सिमटाव और ाई मैं बराबर मदद देता जावेगा ।

९५–यह गुरु स्वरूप चेतन्य और अविनाशी और देखने मैं आकार सहित पर असल मैं निराकार है

और जो अभ्यासी सेवक का गुरु स्वरूप में सच्चा प्यार और भाव है तो यह स्वरूप हमेशा उसके संग रहेगा और ज़ाहिर है कि इस स्वरूप के सामने कोई बिघन मन और माया का ठहर नहीं सक्ता बल्कि जब तक कि अभ्यासी के मन और सुरत इस स्वरूप के ध्यान या ख़याल में लगे रहेंगे तब तक दूसरा ख़याल और किसी क़िस्म का पैदा नहीं हो सक्ता इस तौर से माया और मन और काल और करम के बिघन ध्यानी अभ्यासी से दूर रहते हैं ॥

९६—जो सच्चा परमार्थी है वह जिस वक़्त कि सतसंग में गुरू के सन्मुख जाता है फ़ौरन उसकी हालत बदल जाती है यानी दर्शन करते ही प्रेम हिरदे म उँमगता है और दुनिया के ख़याल उसी वक़्त दूर हट जाते हैं और जिस क़दर देर तक कि गुरू के सन्मुख हाज़िरी रहती है मन और सुरत दर्शन और बचन में सिमट कर लगे रहते हैं और अँतर में आहिस्ता २ उनका खिंचाव ऊँची तरफ़ को होता रहता है फिर ऐसा अभ्यासी अपने अंतर में ध्यान या भजन के समय गुरु स्वरूप का ध्यान या ख़याल करेगा तब वही हालत उसकी जो बाहर गुरू के सन्मुख होती है अंतर में हो जावेगी यानी प्रेम उमँगेगा और संसारी ख़याल और चाहें दूर हो जावेंगी। फिर ऐसी हालत में ध्यान का रस और आनन्द निर्बिघ्न मिलेगा और शब्द भी जो कि

अंतर में हर वक़्त मौजूद है आसानी से प्रगट होकर ... रने लगेगा और उस वक़्त अभ्यासी को इख़्तियार होगा कि चाहे धुन में लग जावे या स्वरूप का रस लेवे या दोनौं कामौं यानी भजन और ध्यान को मिलाकर उनका रस लेवे ॥

९७–संतौं ने और राधास्वामी दयाल ने ख़ासकर अपनी बानो में प्रेम पर ज़ियादा ज़ोर दिया है मतलब उसका यह है कि प्रेम की मदद से काम जल्द और आसानी से बन सक्ता है और निरे वैराग से इस क़दर फ़ायदा हासिल नहीं हो सक्ता और न निरी समझ बूझ मत को ऐसा फ़ायदा दे सक्ती है ॥

९८–कुल काम दुनिया के शौक़ और मुहब्बत से चल रहे हैं और जहाँ किसी का शौक़ और प्यार नहीं है वहाँ उस से कुछ काररवाई नहीं हो सक्ती । इस वास्ते सब जीवौं को चाहिये कि सच्चे और पूरे परमार्थ के हासिल करने के लिये सच्चे मालिक के चरनौं में सच्चा प्रेम लावें और जो कि कुल मालिक अरूप है और किसी को दर्शन उसका पहिले हो नहीं । इस सबब से उस में प्रेम करना मुश्किल है । लेकिन जो कोई पहिले गुरु स्वरूप में प्यार लावे और फिर गुरू के निज स्वरूप से मिलने का जतन करना शुरू करे तो उसका प्यार अरूप पद में आहिस्ता २ पैदा होता और बढ़ता जावेगा और सच्चे गुरू उपदेश के वक़्त भेद उस निज रूप का देंगे

जो कि अकह और अपार और रूप रँग रेखा से न्यारा है और उनका और सेवक का और कुल रचना का वही निज रूप है। तब इस तौर पर भेद को समझकर और रास्ते की मंज़िलें और ठेके दरि-याफ़्त करके अभ्यासी चलना शुरू करेगा और जो प्रेम उसे गुरु स्वरूप में आया है वही उलटकर उन के निज स्वरूप में लगता और बढ़ता जावेगा और इस तरह एक दिन कारज उसका पूरा बन जावेगा॥

९९—इस बचन से ऐसा नहीं समझना चाहिये कि भजन करना मना है या ओछा काम है बल्कि उस को दुरुस्ती से करने के वास्ते मन में सफ़ाई और प्रेम पैदा करना चाहिये। इस क़दर समझ इस बचन से लेनी चाहिये कि जब कभी भजन में नापाक गुनावन और बुरे ख़याल या अपवित्र और पाप की भरी हुई तरँगें बारंबार उठें तो ऐसी हालत में भजन कम कर देना चाहिये और बजाय उसके ध्यान का अभ्यास ज़ियादा करना चाहिये और संतसंग्रह भाग पहिले में से काम क्रोध और मन माया और साध और मृतक का अंग पढ़कर और उसके मतलब को विचार कर अपने मन को धिरकार देकर सम-झाना चाहिये कि आइंदा अपवित्र और नामुनासिब तरंगें न उठावे और राधास्वामी दयाल और सतगुरु की अप्रस   । और पाप करमों के दुखदाई फल का डर दिलाकर मन को होशियार और सफ़ाई

की तरफ़ रुजू करना चाहिये। जब मन सफ़ाई और प्रेम के साथ काररवाई करने लगे तब भजन का वक़्त जिस क़दर मुनासिब हो बढ़ा दिया जावे नहीं तो ध्यान का अभ्यास बदस्तूर ज़ियादा किया जावे और उसके बाद थोड़ी देर के वास्ते भजन का यास भी जारी रहे॥

१००–जिस किसी की ऐसी हालत है कि जब भ में बैठे तब ही नाक़िस और नामुनासिब तरंगें उसके में प्रगट हो कर उसके भजन को ख़राब करती हैं और शब्द का रस नहीं लेने देतीं और वह शख़्स तरंगों को अपने बल से नहीं रोक सक्ता या विषयों के ख़याल के आधीन होकर उन तरंगों को रोकना नहीं चाहता तो उसको चाहिये कि भ बिल मौक़ूफ़ कर दे या सिर्फ़ दस मिनिट करे और मन और माया और काम क्रोध वग़ैरह के अंगो का पाठ स २ कर संतसंग्रह भाग पहिले में से रोज़मर्रा करे और भी शब्द हुक्मनामे को (चेतो मेरे प्यारे तेरे भले की कहूँ) रोज़ दो मर्तबा पढ़े और सिर्फ़ सुमिरन और ध्यान करता रहे और जब तक इस अभ्यास से मन और सुरत उसके किसी क़दर निर्मल और साफ़ न होवें तब तक शब्द का अ स यानी भजन मुलतवी रक्खे और संसार में और परमार्थ में बहुत होशियारी और डर के साथ बर्ताव करे कि जिस में पाप करम उससे न बने और

न उनके ख़याल अंतर में उठें नहीं तो भारी हर्ज उसके परमार्थ की कमाई में होगा ॥

१०१-जो अभ्यासी को सतगुरु के चरनों में किसी क़दर परमार्थी भाव और प्यार है और वक़्त ध्यान और भजन के उनके स्वरूप को अगुवा करके अभ्यास शुरू करेगा तो अंतर में मन और इंद्रियों का ज़ोर किसी क़दर घटता नज़र आवेगा और प्रेम और उमंग की थोड़ी बहुत तरक़्क़ी होती जावेगी ॥

१०२-कुल मालिक जो कि घट २ में अंतरजामी है सच्चे सेवक को अपने चरनों में प्रीत और प्रतीत दिलाने और उसके बढ़ाने के निमित्त मौज से जब तब गुरु स्वरूप धारन करके अंतर में वक़्त अभ्यास या स्वप्न अवस्था के (जब कि मन और सुरत का सिमटाव अंदर की तरफ़ होता है और देह और इंद्रियों की तरफ़ झुकाव नहीं रहता) दर्शन देता है। यह दर्शनी स्वरूप हाड़ मास का नहीं है बल्कि चेतन्य यानी रूहानी है और सेवक को पहिचान कराने के मतलब से धारन किया जाता है नहीं तो वह कुल मालिक राधास्वामी दयाल अरूप तार से भी अंतर में दया फ़र्मा सक्ते हैं पर सेवक को उस की पहिचान नहीं होगी और इस सबब से उनकी महिमा और मेहर और दया की ख़बर नहीं पड़ेगी॥

१०३-जब कि कभी २ सेवक को ऐसे दर्शन अपने घट में मिल गये तो उसी स्वरूप का जब अभ्यास

के समय या और किसी वक़्त ध्यान या ख़याल करेगा तब ज़रूर थोड़ा बहुत प्रेम जागेगा और मन और इंद्री भी उस वक़्त नीचे पड़ जावेंगे यानी अभ्यास में बिघन नहीं डालेंगे ॥

१०४–इसी सबब से सतगुरु स्वरूप और उसके ध्यान की महिमा और फ़ायदा ज़बर है कि मालिक अंतर-जामी सेवक पर दया करने के वास्ते और उसकी प्रीत और प्रतीत बढ़ाने के लिये आप उस-स्वरूप को धारन करके घट में दर्शन देता है और यह स्वरूप सेवक के साथ जहाँ तक कि रूप रंग रेखा है सूक्षम से सूक्षम होता हुआ संग रहेगा और अंतर में मदद देगा और फिर यही स्वरूप अरूप की भी पहिचान कराता जावेगा इस वास्ते हर एक प्रेमी अभ्यासी को चाहिये कि जब कभी ऐसे दर्शन अंतर में वक़्त अभ्यास या सुपने में मिलें तो उसको दर्शन मालिक का समझ कर उस स्वरूप में प्रीत और भाव लावे। यह दर्शन आसानी से या जब जी चाहे तब नहीं मिलते हैं बल्कि किसी क़दर ऊँचे देश में जब मन और सुरत सिमटकर वक़्त अभ्यास या सोने के वहाँ पहुँचें तब मौज से प्राप्त होते हैं और इसी को ख़ास निशान राधास्वामी दयाल की दया का समझना चाहिये ॥

१०५–यह दस्तूर आम है कि जिस किसी ने जो कोई सूरत या चीज़ देखी है वह जब उसका ख़याल

करे वह सूरत थोड़ी बहुत उसकी आँखों में आ जाती है लेकिन सतगुरु स्वरूप का ख़याल इस तौर से जब चाहे तब नहीं आता है। सबब इसका यह है कि आम सूरतों का जब कोई आदमी ख़याल करता है उसके मन या आँखों में अक्स या छाया नज़र आजाती है लेकिन सतगुरु स्वरूप का जब दर्शन होता है वह ऊँचे देश में असली या सच्चा होता है और जब कभी होता है तब राधास्वामी दयाल की मेहर और दया से होता है, वास्ते बढ़ाने प्रीत और प्रतीत सेवक के॥

१०६–लेकिन इस क़दर समझना चाहिये कि जब तक सेवक को बाहर सतगुरु के स्वरूप में भाव और प्यार न होगा और अंतर स्वरूप की महिमा न जानेगा तब तक मालिक अंतरजामी गुरु स्वरूप में दर्शन बहुत कम देवेंगे यानी बाज़े लोग इस क़िस्म के हैं कि उनके मन में विद्या और बुद्धि के सबब से स्वरूप में भाव नहीं आता और उसको वह महदूद और अल्पज्ञ और ओछा समझकर ऐसा ख़याल करते हैं कि मालिक तो अरूप और अपार है वह स्वरूप धारी कैसे हो सक्ता है सो जब कभी उनको इत्तिफ़ाक़ से ऐसा दर्शन भी (उनके मन की हालत के जाँच की नज़र से) मिल जाता है तो उनको उस में मुतलक़ भाव नहीं आता और उसको ख़ाब और ख़याल समझते हैं। ऐसे लोगों को मालिक अंतर-

जामी गुरु स्वरूप में दर्शन नहीं देते हैं और जो कि अरूप की उनको जाँच और पहिचान जब तक कि सुरत ज़ियादा ऊँचे देश में न पहुँचे नहीं आ सक्ती इस वास्ते वे इस क़िस्म की दया से अर्से तक ख़ाली रहते हैं और मन और इंद्रियों के बिघन भी उनको ज़ियादा ते रहते हैं ॥

१०७—इन लोगों को इस बात की समझ अच्छी तरह नहीं आती कि आदि स्वरूप (जहाँ से रूप रँग रेखा खड़े हुए) उस मालिक ने ही धारण किया और फिर वही आकार नीचे की रचना में कमी बेशी के साथ उतरता आया और वह आदि स्वरूप ऐसा ही अपार है जैसा कि अरूपी स्वरूप बल्कि नीचे के दरजों में भी स्वरूप ऐसा ही अपार है कि जिसका कोई अंदाज़ और हिसाब नहीं कर स लेकि अफ़सोस यह है कि यह लोग अपनी ओछी समझ के मुवाफ़िक़ स्वरूप के लफ़्ज़ और नाम को हमेशा हद्दार और ओछा स ते हैं। ब इसका यह है कि इनकी नज़र स्थूल रचना में बँधी हुई है और सूक्ष्म से सूक्ष्म रचना का इनको अनुमान नहीं होता इस वास्ते यह शुरू से अरूप की तरफ़ दौड़ते हैं और हाल यह है कि जब तक रू नि रचना की हद्द के पार न जावेंगे इनको उस अरूप का जिसकी कि यह महिमा समझते हैं कभी दर्शन प्राप्त नहीं हो । और इस नादानी

इनको यह फल मिलता है कि प्रेम और उमंग से जो कि रास्ते के जल्दी काटनेवाले और अभ्यास में रस और आनंद प्राप्त करानेवाले हैं ख़ाली रहते हैं और अभ्यास में मन और इंद्रियों के विघनों से झटके खाते रहते हैं और इस सबब से चाल भी इनकी सुस्त रहती है और रूखा फीकापन हमेशा इनके मन और सुरत पर थोड़ा बहुत छाया रहता है और जब तब रस न मिलने की शिकायत करते रहते हैं और कभी २ प्रीत प्रतीत भी डिगमिग हो जाती है ॥

१०८–एक भारी नुक़सान ऐसे अभ्यासियों में यह है कि वे अकसर अपना बल लेकर अभ्यास करते हैं और अपने वैराग वग़ैरह का ज़ियादा भरोसा रखते हैं और स्वरूप के प्रेमियों को अकसर ओछा देखते हैं और अपने से अभ्यास और वैराग में उनको ख़याल करते हैं और हाल यह है कि प्रेमियों को थोड़े अभ्यास में रस और आनंद बहुत मिल जाता है और गुरु स्वरूप को अगुवा रखने से उनके मन और इंद्री किसी क़िस्म का विघन नहीं डालते और यह लोग हरचंद ज़ियादा अभ्यास करते नज़र आते हैं और अपना बल लेकर मन और इंद्रियों से हर रोज़ जूझते हैं फिर भी उनको प्रेमियों के बराबर रस नहीं मिलताऔर जब २ मौज से रस मिलता है तो किसी क़दर उ ा अहंकार भी उनके मन में आ जाता है ॥

१०९–लेकिन जो भाग से इन लोगौं को सतगुरु का सतसंग प्राप्त होता रहा तो इनकी समझ भी आहिस्ता २ बदलती जावेगी और कोई दिन के अभ्यास के बाद जब उनकी सुरत सिमटकर किसी क़दर ऊँचे देश मैं चढ़ने लगेगी तब गुरु स्वरूप की महिमा उनके चित्त मैं समाती जावेगी और फिर वेही प्रेमियोँ के मुवाफ़िक़ अभ्यास मैं थोड़ी बहुत गुरु स्वरूप की मदद लेकर चलने लगैंगे और फिर उनका रास्ता भी आसानी से तै होता जावेगा। इन लोगौं को बमुक़ाबले प्रेमी अभ्यासियोँ के जो बिबेक अंग वाले अभ्यासी कहा जावे तो यह कहना दुरुस्त है ॥

११०–खुलासा यह है कि चाहे कोई प्रेम अंग लेकर चले या बिबेक और बैराग अंग पर ज़ोर देकर रा तै करना शुरू करे दोनौं को पिंड देश से आहिस्ता २ न्यारे होकर अपने निज धाम की तरफ़ चलना और चढ़ना ज़रूर है क्योंकि जब तक कि सुरत माया के घेर के पार न जावेगी तब तक काम पूरा नहीं बनेगा यानी जब तक कि सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल के धाम मैं न पहुँचेगा तब तक निर्भय और निःचिन्त नहीं हो सकता और न परम आनंद प्राप्त हो सकता है और वहीं पहुँचकर जनम मरन और काल के कलेश से सच्चा छुटकारा होगा ॥

१११–इस वास्ते कुल परमार्थी जीवौं को जो अपना सच्चा उद्धार चाहते हैं और जीते जी अपनी भक्ती

और अभ्यास का थोड़ा बहुत फल देखते चलना मंजूर है तो उनको चाहिये कि सतगुरु खोजकर उनका सतसंग भाव और प्रीत के साथ करें और संशय और भरम दूर करके सुरत शब्द मारग का उपदेश लेकर उमंग और प्रेम के साथ उसकी कमाई करें और सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल की सरन दृढ़ करके और उनकी मेहर और दया का आसरा और भरोसा रख कर रास्ता ते करना शुरू करें और प्रीत और प्रतीत चरनों में बढ़ाते जावें तब दिन २ उनको अभ्यास में थोड़ा बहुत रस मिलता जावेगा और आहिस्ता २ तरक्की करके एक दिन राधास्वामी दयाल की दया से धुर धाम में पहुँच कर परम और अमर आनंद को प्राप्त होंगे ॥

११२–प्रेमी अभ्यासियों को इस क़दर जता देना मुनासिब मालूम होता है कि अभ्यास के समय चाहें उनको दर्शन गुरु स्वरूप का प्रत्यक्ष होवे या नहीं उनको अपने मन और सुरत को स्वरूप का ख़याल करके स्थान पर जमाना चाहिये और जो उनके मन में थोड़ा स्वरूप का भाव और प्रेम है तो यह काररवाई उनसे दुरुस्त बन पड़ेगी यानी मन और सुरत उनके स्वरूप के आसरे स्थान पर किसी क़दर ठहरने लगेंगे और ऊँचे देश में ठहरने का रस थोड़ा बहुत ज़रूर मालूम पड़ेगा और ज़ियादा ठहराव या ऊँचे स्थान पर चढ़ाव के साथ वह रस और आनंद बढ़ता जावेगा ॥

११३–जो कोई अभ्यासी यह चाहते हैं कि पहिले हमको दर्शन मिले तब ध्यान करें यह चाह उनकी नाजा . तो नहीं है पर कमी शौक़ और बिरह और प्रेम की इस से पाई जाती है क्योंकि ऐसी मौज मालूम नहीं होती है कि हर किसी को दर्शन स्वरूप के अंतर में मुवाफ़िक़ के इरादे के जब चाहे जब मिल जावें इस वास्ते कुल सतसंगियों को मुनासिब है कि अपने २ शौक़ के मुवाफ़िक़ स्वरूप अनुमान करके अभ्यास शुरू करें और दर्शनों की प्राप्ती मौज पर छोड़ दें राधास्वामी दयाल जब जब और जैसे जैसे जिस २ जीव के वास्ते मुनासिब होगा वक़्तन फ़वक़्तन दया फ़रमावेंगे यानी किसी को अक्सर और किसी को कभी २ स्वरूप का दर्शन देते रहेंगे ॥

११४–मुवाफ़िक़ ख़ाहिश के हर रोज़ और हर वक़्त जब मन चाहे दर्शन मिलने में बड़ी आसानी अभ्यास की होती है और प्रेम भी जल्द बढ़ता है पर यह हालत थोड़े दिन रह सकती है क्योंकि रास्ता दूर व दराज़ है और वास्ते उसके कटने के बिरह और शौक़ की तरक़्क़ी ज़रूर चाहिये और मन में बेकली और घबराहट का जब तब पैदा होना वास्ते उसकी . ई और चढ़ाई के ज़रूर है यह बात जब तक कि दर्शन हर . मिलते रहेंगे हासिल न होगी ॥

११५–और यह बात भी सतसंगियों को जानना ज़रूर है कि सच्चे परमार्थ के हासिल करने के वास्ते

सच्चे गुरू का संग चाहिये। जो संत सतगुरु न मिलैं तो जो कोई प्रेमी सतसंगी उन से मिला हुआ मिल जावे और वह साधना कर रहा है और कुल मालिक राधास्वामी दयाल का मंज़ूर नज़र है यानी उस पर उनकी मेहर और दया है तो उसके संग में भी कारज बनना मुमकिन है यानी जब कोई सच्चा प्रेमी उस सतसंगी से भेद और जुगत दरियाफ़्त करके अभ्यास शुरू करेगा तो उसको राधास्वामी दयाल अपने चरनौं में लगावैंगे और अंतर और बाहर परचे देकर उसकी प्रीत और प्रतीत को बढ़ावैंगे इस से उस सच्चे प्रेमी को यक़ीन हो जावेगा कि कुल मालिक राधास्वामी दयाल ने उसको मंज़ूर और क़बूल फ़र्माया यानी अपना कर लिया और दिन २ उसकी दुरुस्ती करते जाते हैं फिर उसको मुनासिब होगा कि उसी प्रेमी सतसंगी का सतसंग करे जाय और जो ज़ाहिरी समझ बूझ और मदद दर्कार होवे उससे लिये जावे वह आप चल रहा है और उसको भी संग २ चलाता जावेगा और एक दिन दोनौं धुर घर में पहुँच जावैंगे॥

११६—अक्सर सतसंगी अभ्यासी इस बात की जल्दी करते हैं कि हमारी सुरत एक दम चढा दी जावे या कि कोई मुक़ाम हमको खुल जावे यह चाह तो अच्छी है लेकिन इसके पूरे होने के लिये जल्दी और इज़्तिराबी और घबराहट नहीं चाहिये क्योंकि यह

काम आहिस्ता २ दुरुस्त बनेगा और जल्दी में
नुकसान होगा ॥

११७–मा होवे कि सुरत की धार से तमाम बदन
चेतन्य है और जिस क़दर वह धार सि कर ऊपर
की तरफ़ चढ़ती जावेगी उसी क़दर पिंड ख़ाली होता
जावेगा या आँकि उस में कमी होती जावेगी सो ऐसी
कमी की बर्दाश्त यकायक नहीं होगी लेकिन जो
आहिस्ता २ चढ़ाव और उतार होगा तो उस में किसी
क़िस्म का हरज देह की कार्रवाई और उस की
सम्हाल में वाक़े नहीं होगा और जो मुख्य अंग मन
और सुरत का एक दम या जल्दी खिंच जावेगा तो
देह की सम्हाल जैसी चाहिये वैसी नहीं हो सकती
और न दुनिया के कारोबार में मन लगेगा यानी
ऐसे अभ्यासी का बर्ताव यकतर्फ़ा हो जावेगा बल्कि
परमार्थ भी आइन्दा दुरुस्ती से नहीं बनेगा और
बेहोशी ज़ियादा ग़ालिब होकर आगे का रास्ता बन्द
हो जावेगा फिर वह स न स्वार्थ के काम का रहा
और न परमार्थ का, दोनौं कामौं में भारी हरज और
नुक़सान होगा, इस वास्ते ऐसी चाल संत नहीं चलाते,
उनको जीव को आहिस्ता २ चलाकर धुर मंज़िल
पर पहुँचाना मंजूर है न कि रास्ते में का कर
छोड़ देना ॥

११८–इस वास्ते कुल अभ्यासियौं संगियौं को
मुनासिब है कि ऐसी जल्दी कि जिस में उनका काम

बिगड़े न करैं और जैसे २ उनको राधास्वामी दयाल कभी २ रस और आनन्द और कभी २ बिरह और बेकली देकर चलावैं उसी तरह चलते जावैं और अपनी तरक्क़ी के वास्ते जब २ दिल चाहे अर्ज़ मारूज़ भी करते रहैं पर निराश होकर अभ्यास मैं सुस्त और ढीले न हो जावैं और अपने प्रेम को रूखा फीका न होने दैं ॥

११९–यह मन अपने निज घर को जुगानजुग से भूलकर माया और उसके पदार्थौं मैं लिपट कर उलटी चाल और ढाल मैं बरत रहा है सो जब तक इसकी पूरी सफ़ाई न होगी तब तक अंतर मैं आँख नहीं खोली जावेगी लेकिन गौन यानी समान अंग से सुरत की चढ़ाई बराबर कराई जाती है और इसी तौर से रास्ता खुलता और साफ़ होता जाता है और जब मन की पूरी गढ़त हो जावेगी और सुरत को ताक़त बरदाश्त रस और आनन्द ऊँचे देश की आ-जावेगी तब राधास्वामी दयाल अपनी मेहर और दया से थोड़ी बहुत अंतर मैं आँख खोलैंगे और ताक़त भी देवैंगे यानी प्रेम बहुत बढ़ा दैंगे कि जिस से यह सुरत अंतर मैं बहुत तेज़ चलने लगेगी और आसानी के साथ रास्ता जल्द तै होता जावेगा और तबही इसको पूरी २ महिमा सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल और उनके शब्द और उनके जुगत की ज्यों

की त्यों समझ में आवेगी और फिर शांती और निःचिन्ती और गहरा आनंद भी हासिल होगा ॥

१२०–जब तक कि ऐसी गत और हालत हासिल होवे तब तक अभ्यासी सतसंगी को मुनासिब है कि अपना अभ्यास धीरज धर कर प्रीत और प्रतीत के साथ करे जावे और आहिस्ता २ अपनी तरक़्क़ी देखता जावे और तरक़्क़ी का निशान यह है कि अभ्यासी के मन में दिन दिन प्रीत और प्रतीत राधास्वामी दयाल और उनके शब्द और जुगत की बढ़ती जावे और दुनिया और उसके भोगों और कुटुम्ब परिवार की मुहब्बत कम होती जावे ॥

१२१–प्रेमी सतसंगी को इस बात का भी लिहाज़ रखना चाहिये कि कुल मालिक राधास्वामी दयाल से सिवाय उनके और उनके चरनों की प्रीत और प्रतीत के और कुछ न माँगे वाजिबी ज़रूरत के वास्ते जो सामान दरकार है उसके माँगने में कुछ हर्ज नहीं है मगर और मुआमलों में अपनी ख़ाहिश या माँग का पेश करना मुवाफ़िक़ क़ायदे भक्ती के नामुनासिब है लेकिन जो मन किसी वक़्त और किसी हालत में धीरज और सब्र न लावे तो बाद करने अपने मामूली अभ्यास के जो कुछ चिंता या फ़िक़र या चाह दिल में होवे उसको बेतकल्लुफ़ चरनों में राधास्वामी दयाल के अर्ज़ करके प्रार्थना करे और ज़हूर उसके नतीजे का उनकी मौज पर छोड़

दे और जो उसकी भक्ती सच्ची है तो किसी ख़ास मुआमले में अगर वह हठ के साथ अर्ज़ करे तो भी कुछ मुज़ायक़ा नहीं राधास्वामी दयाल अपनी मेहर और दया से जो मुनासिब समझैं तो उसकी हठ को भी पूरा कर सक्ते हैं और मामूली अर्ज़ को भी मंज़ूर कर सक्ते हैं इस वास्ते माँगना क़तई मना नहीं किया गया लेकिन इस क़दर एहतियात चाहिये कि जो माँग पूरी न होवे या सतसंगो की ख़ाहिश के मुवाफ़िक़ काम न बने तो उन से बेमुख न हो जावे और जो कुछ कि मौज से होवे उसी में मसलहत और अपना असली फ़ायदा समझकर धीरज और सबर और संतोष के साथ बरदाश्त करे ॥

१२२–जब कभी कोई चिंता या तकलीफ़ पेश आवे तो उस वक्त़ मुनासिब है कि ध्यान या भजन में बैठकर पहिले अपनी चिंता या तकलीफ़ का हाल अर्ज़ करे और फिर अपने मन और सुरत को समेट कर जिस क़दर बन सके स्वरूप या शब्द या दोनों में लगा देवे तो उसको थोड़ी बहुत शांती या सबर या ताक़त बरदाश्त की ज़रूर हासिल होगी ॥

१२३–उत्तम दर्जे की भक्ती का क़ायदा यह है कि भक्त यानी प्रेमी सतसंगी की किसी क़िस्म की अपनी चाह या किसी चीज़ में गहरा बंधन न रहै और अपने भगवंत यानी कुल मालिक को सर्व समरथ और अंतरजामी और अपना सच्चा हितकारी और हर वक्त़

का मददगार समझकर निःचिंत रहे और अपने मालिक के चरनों के मैं हर वक़्त मगन रहे और जब तब चरन रस लेता रहै लेकिन यह हालत हर एक की एक दम नहीं हो सकती आहिस्ता २ सतसंग और अभ्यास और भक्ती करके दुनिया के ख़याल और चाहैं और बंधन और चिंता कम और हलके होते जावैंगे और उसी क़दर राधास्वामी दयाल की सरन पक्की होती जावेगी और उनकी दया का भरोसा मज़बूत होता जावेगा सो जब तक कि हालत पूरन प्रेम की हासिल होवे तब तक जब २ अभ्यासी भक्त के मन में जो चाह ज़रूरी सामान की उठे या कोई तकलीफ़ या चिन्ता सतावे उस वक़्त जो वह अपना हाल चरनों में अर्ज़ करे या कोई माँग माँगे तो कुछ ...यक़ा नहीं है राधास्वामी दयाल अपनी मेहर से कच्चे लेकिन सच्चे भक्त की सम्हाल जिस क़दर मुनासिब है आप फ़रमावैंगे और जब जब मुनासिब समझैंगे उसकी अर्ज़ और माँग भी मंजूर करेंगे और जो मंजूर करना मुनासिब नहीं होगा तो (जो मुनासिब होगा) उसकी वजह यानी मसलहत भी उस को जतावैंगे जिससे उसको ताक़त बरदाश्त की हासिल होगी और किसी वक़्त और हालत मैं अधीर और बे र न होगा पर शर्त यह है कि जब से वह राधास्वामी दयाल की सरन मैं आया कोई नाक़िस यानी पाप कर्म जान बूझ कर न करे और

अपना ब्यौहार और बरताव उनके हुक्म के मुवाफ़िक़ जहाँ तक बन सके दुरुस्त करे ॥

१२४—और मालूम होवे कि बहुतसी तकलीफ़ाँ और बलाओं को जो कि अभ्यासी सतसंगी के पिछले करमोँ के असर से आयद होती हैं बाला २ अपनी मेहर और दया से टाल देते हैं या सूली का काँटा कर देते हैं कि जिनकी उसको ख़बर भी नहीं होती और बहुत से कर्मों को सहज में बाहर या अंतर अभ्यास में भुगतवा देते हैं कि जिनकी बहुत थोड़ी झड़प इसको मालूम होती है और उन करमोँ के पूरे असर की ख़बर भी नहीं होती इस सबब से हर दम सतसंगी अभ्यासी को उनकी दया का शुकराना वाजिब है इसी तरह सिर्फ़ सतसंगी अभ्यासी के नहीं बल्कि उसके प्यारोँ और नज़दीक के रिश्तेदारोँ के भी करम बहुत रिआयत के साथ काटे जाते हैं कि जिस से उनको और सतसंगी अभ्यासी को बहुत कम तकलीफ़ व्यापती है और बहुत रफ़ाहियत यानी बचाव और सम्हाल उन करमोँ के भुगताने में राधास्वामी दयाल अपनी दया से फ़र्माते हैं, ऐसी दया का हाल हर एक सतसंगी को मालूम भी नहीं होता यानी जताया नहीं जाता है लेकिन जो कोई अपने रोज़मर्रा के हाल और मन और इंद्रियोँ की चाल और दया की सम्हाल की निरख परख करते रहते हैं उनको थोड़ा

बहुत हाल दया और रक्षा का मालूम होता रहता है और वेही तहेदिल से शुकराना बजा लाते हैं ॥

१२५- ी सतसंगी को मुनासिब और लाज़िम है कि जो वह भजन की तरक़्क़ी और रस चाहे तो अपना संसारी ब्यौहार और परमार्थी बरताव दोनों को मुवाफ़िक़ हुक्म के जिस क़दर बन सके दुरुस्त करे और इस बात की होशियारी रक्खे कि जहाँ तक मुमकिन होवे उसके हाथ से अपने मतलब के लिये किसी को दुःख और तकलीफ़ न पहुंचे और आम तौर पर प्रीत और दया भाव का बरताव सब के साथ रहे । जो लोग कि राज दरबार में नौकरी करते हैं और वहाँ उनको लोगों को दंड और सज़ा देना पड़ता है या किसी के साथ नरमी और किसी के साथ सख़्ती से बर्ताव करना पड़ता है तो मुवाफ़िक़ क़ानून के अमलदरामद करने में कुछ मुज़ायक़ा नहीं है लेकिन जो मुनासिब तौर पर थोड़ा दया का अंग उस बरताव में संग रहे तो बेहतर है ॥

१२६-इसी तरह परमार्थ के बरताव में मुख्यता मालिक के चरनों में प्रीत और प्रतीत की है बग़ैर इसके न तो सरन दुरुस्त हो सक्ती है और न अभ्यास थोड़े बहुत प्रेम के साथ बन सकता है इस वास्ते हर एक काम में राधास्वामी दयाल की दया और मौज का आसरा रखना मुनासिब और ज़रूर है और फ़ुज़ूल तरंगों संसारी भोग और बिलास और नामवरी

वग़ैरह से जहाँ तक बन सके अपना बचाव रखना लाज़िम है कि जिस से अपने हिरदे में मलीनता न बढ़े और भजन में बिघन वाक़े न होवें ॥

१२७—जो इन दो शब्दों का पाठ रोज़मर्रा थोड़ी होशियारी के साथ एक दफ़े नेम से कर लिया जावे तो यक़ीन होता है कि राधास्वामी दयाल की दया से ग़फ़लत और भूल कम होवेगी और बहुत से कामों में एहतियात बन आवेगी और जो कोई र का काम इत्तिफ़ाक़ से या अनजाने बन पड़ेगा, तो उसकी ख़बर जल्द हो जावेगी और पछताने और प्रार्थना करने से उसका नाक़िस असर, जल्द दूर हो जावेगा और आइंदा को होशियारी बढ़ती जावेगी और इन शब्दों में जहाँ लफ़्ज़ गुरू का आया है उससे मतलब सिर्फ़ देहधारी गुरू से नहीं है बल्कि कुल मालिक राधास्वामी दयाल से है यानी गुरू लफ़्ज़ से मतलब कुल मालिक और नर स्वरूप गुरू से है और वह दोनों शब्द यह हैं जिनकी एक एक कड़ी नीचे लिखी है—

शब्द (१) चेतो मेरे प्यारे तेरे भले की कहूँ; शब्द (२) गुरू की मौज रहो तुम धार ॥

१२८—संत अथवा राधास्वामी मत में बाहरी पूजा प्रीत भाव के साथ संत-सतगुरु के साथ की जाती है क्योंकि उनका स्वरूप जो कि अभ्यासी के अंतर में ध्यान करके प्रगट होगा चेतन्य और अकाल रूप है

और जहाँ तक कि रूप रंग रेखा है वहाँ वह रूप दरजे बदर्जे सूक्ष्म और नूरानी होता हुआ अभ्यासी के संग जावेगा और सच्चे अरूप पद में जो कि रूप रंग रेखा से न्यारा है पहुँचा देगा ॥

१२९-और अंतर में सेवा संत सतगुरु के निज रूप की है जो कि शब्द और प्रकाश स्वरूप है और वह सेवा यह है कि चित्त देकर आवाज़ को सुनना और उसके आसरे सुरत को चढ़ाना सो जब तक कि संत गुरु के ज़ाहिरी स्वरूप में गहरा प्यार नहीं आवेगा तब तक शब्द स्वरूप भी जैसा कि चाहिये प्रगट नहीं होगा और न उस में गहरी प्रीत आवेगी यानी अंतर में चढ़ाई संत सतगुरु के ज़ाहिरी स्वरूप की मदद से होवेगी जो उसमें गहरा प्रेम रहा है ॥

१३०-राधास्वामी मत के अभ्यासियों को चाहिये कि बिरह और उमंग लेकर अपना अभ्यास नेम के साथ रोज़मर्रा करें और मन और सुरत और दृष्टि को पहिले पाँच चार मिनिट तीसरे तिल के मुक़ाम पर जमावें और फिर पहिले और दूसरे स्थान पर तवज्जह रख कर यानी चित्त को ठहरा कर शब्द को सुनें और ध्यान के वक्त उसी मुक़ाम पर नज़र और चित्त को ठहराकर स्वरूप का ख़याल करें (चाहे जब नज़र आवे) और अभ्यास करने में चढ़ाई के वास्ते नीचे से ऊपर की तरफ़ बहुत ज़ोर न लगावें सहज स्वभाव मन और चित्त और नज़र को ऊपर

की तरफ़ तान कर मुक़ाम पर शब्द या स्वरूप के आसरे ठहरावें और होशियारी रक्खें कि दुनिया के ख़यालात किसी क़िस्म के मन में न आवें और न किसी तरह की तरंग स्वार्थी या परमार्थी उठावें तो अभ्यासी को थोड़ा बहुत रस और आनंद शब्द या स्वरूप का ज़रूर मिलेगा ॥

१३१–जो अभ्यास के वक़्त हालत बिरह और उमंग की न होवे तो चाहिये कि पहिले दो शब्द चितावनी और बैराग और दो शब्द प्रेम के ग़ौर से पढ़ कर अभ्यास में बैठें और अपनी कसरों पर नज़र करके दीनता के साथ थोड़ी प्रार्थना वास्ते प्राप्ती दया के राधास्वामी दयाल के चरनों में करें और फिर भजन या ध्यान शुरू करें जो इस पर भी मन न माने और गुनावन और ख़यालात बेफ़ायदा उठावे तो जो भजन करते होवें उस में ध्यान शामिल करदें यानी उसी आसन से बैठे हुए स्वरूप का ध्यान करें और शब्द की तरफ़ भी तवज्जह रक्खें और जो फिर भी गुनावन बन्द न होवे तो सुमिरन नाम का भी करते जावें इस तरह मन थोड़ा बहुत निश्चल होकर अभ्यास में लगेगा ॥

१३२–जो फिर भी गुनावन दूर न होवे और मन दुरुस्ती के साथ भजन में न लगे तो भजन या ध्यान के वक़्त किसी प्रेम के शब्द या प्रेम की कड़ियों को अंतर में या थोड़ी आवाज़ के साथ थोड़ी देर गावें

से यक़ीन है कि गुनावन दूर हो जावेंगे और भजन और ध्यान का रस आवेगा ॥

१३३—जो इस पर भी मन रूखा फीका रहे और ालात बेफ़ायदा उठावै तो भजन और ध्यान छोड़ कर धुन के साथ नाम का सुमिरन करैं इस तरह कुछ सफ़ाई हासिल होगी और फिर थोड़ी देर ध्यान या भजन करैं या दोनों को मिला कर अभ्यास करैं तो फ़ायदा मालूम पड़ेगा ॥

१३४—जो किसी वक्त़ इन कामों में मन बिलकुल न लगे या रूखा फीका रहे तो पाँच शब्द जिन में रास्ते का भेद और चढ़ाई का हाल होवे ग़ौर के साथ और अर्थों पर नज़र रख कर आहिस्ते २ या थोड़ी आवाज़ के साथ पढ़ैं और मुक़ाम २ पर जैसा कि उनका ज़िकर आवे मन और चित्त को ख़याल के साथ ठहराते जावैं और शब्द की हर एक कड़ी को चार या पाँच दफ़े या जियादा पढ़ैं और उतनी देर उसी ाम पर जिसका ज़िकर कड़ी में है चित्त को ठहरावैं इस क़िस्म का पाठ थोड़ा बहुत भजन और ध्यान की बराबर फ़ायदा देगा और होशियारी रक्खैं कि और कोई ख़याल संसारी या परमार्थी मन में न आवे ॥

१३५—जो इन कारर्वाइयों में से कोई भी दुरुस्ती से न बन सके तो समझना चाहिये कि मन निहायत करमी और मलीन है और उसकी सफ़ाई का इलाज

यह है कि चँद रोज़ होशियारी के साथ सतसंग करे और प्रेमी और साध जन की थोड़ी बहुत सेवा इख़्तियार करे और उनके और सतसंग के बचनों की चित्त देकर सुने और मनन करे तब कुछ अरसे में सफ़ाई हासिल होगी और शौक़ पैदा हो जावेगा फिर जो अभ्यास कि ऊपर लिखा गया है उससे दुरुस्ती से बनना शुरू हो जावेगा ॥

१३६–और जो ऐसा मौक़ा न होवे कि कोई दिन सतसंग में रहकर सेवा या अभ्यास करे तो यह तरकीब करे कि घंटे दो घंटे बाद पाँच मिनिट सात मिनिट जहाँ बैठा हो या कोई काम हाथों से कर रहा हो या चारपाई पर लेटा होवे आँख बन्द करके पहिले स्थान पर मन और सुरत और दृष्टि को जमा कर सुमिरन और ध्यान करे इस क़दर थोड़े अर्से यानी पाँच सात मिनिट में मन चंचल नहीं होगा और न कोई ख़याल और तरंगें उठावेगा इस तरह दिन रात में जो दस बारह दफ़े भी यह अभ्यास बन पड़ा तो क़रीब एक घंटे के या कुछ ज़ियादा वक़्त इस निरमल अभ्यास में लग जावेगा और कोई दिन में थोड़ा बहुत रस ज़रूर आवेगा कि उसका असर हर वक़्त मालूम पड़ेगा और मामूली भजन और ध्यान के भी पाँच २ सात २ मिनिट कई बार करके मन स्थिर होकर रस पावेगा और रफ़्ते २ मामूली अभ्यास भी दुरुस्ती से बनेगा और सिवाय

उसके यह चंद मिनिट का अभ्यास भी और २ वक्तों पर जारी रहेगा कि जिससे जल्द सफ़ाई मन और इंद्रियों की होती जावेगी और आनन्द भी हिस्ता आहिस्ता बढ़ता जावेगा ॥

१३७–जो किसी को वक्त या न के इधर से त हो जावे और र में होश रहे तो यह निशान दुरुस्ती अभ्यास का है लेकिन जो नींद की सी हालत हो और दोनों तरफ़ का होश न रहे तो मुनासिब है कि वक्त शुरू होने ऐसी हालत के दो चार मिनिट के वास्ते अभ्यास छोड़ कर अ खोल दे और जो सुस्ती दूर न होवे तो र दो चार क़दम टहल कर फिर अभ्यास करे और जो फिर नींद की सी हालत होवे तो वही इलाज करे और जो फिर भी ग़फ़लत होवे तो उस अभ्यास मुलतवी करदे ॥

१३८–कम से कम एक वक्त आध घंटा या बीस मिनिट अभ्यास करना चाहिये और जिस अभ्यास (भजन या ध्यान) में मन ज़ियादा लगे वह ज़ियादा करना चाहिये और दूसरा कम, लेकि यह दोनों अभ्यास दो दफ़े रो री ज़रूर करना मुनासिब है और जहाँ तक किन होवे नाग़ा नहीं करना चाहिये ॥

१३९–मामूली तौर पर अभ्यास का वक्त सुबह और शाम का मुनासिब है और कोई क़ैद नहाने और धोने और जगह वग़ैरह की नहीं है जिस तरह जिस

का दिल चाहे आराम के साथ फ़र्श पर बैठे और
जो पेशाब या पाख़ाने की हाजत होवे तो उससे
फ़ारिग़ होकर बैठे और जगह की इस क़दर एहतियात
चाहिये कि अभ्यासी के दीक शोर व ग़ुल न होवे
और कोई ग़ैर आदमी वहाँ मौजूद न रहे और कोई
अभ्यासी को अभ्यास की हालत में न छेड़े जो ज़रूरत
होवे तो दूर से आवाज़ देवे ॥

१४०—शौक़ीन अभ्यासी को इख़्तियार है कि चाहे
जिस वक़्त खाना खाने से पेश्तर या दो तीन घंटे
बाद खाना खाने के चाहे जिस जगह अभ्यास करे
और चाहे जितनी देर दस मिनिट से लगाकर एक
घंटे घंटे या डेढ़ घंटे तक जिस क़दर दिल चाहे
एक मरतबे अभ्यास करे और जब दया से उसकी
और मन सिमट कर ऊपर की तरफ़ को चढ़ने
लगें तो शुरू में इस क़दर एहतियात रक्खे कि बहुत
ज़ियादा और बहुत ऊँचे की तरफ़ उनको न खींचे
आहिस्ता २ जिस क़दर बरदाश्त होवे चढ़ाई करे
और ऐसा होवे कि बसबब ज़ियादा चढ़ाई के
दिल तड़पने लगे तो जितनी बरदाश्त होवे अ
जारी रक्खे और जब ऐसी हालत दिल की बरदाश्त
न हो तो उस वक़्त अभ्यास छोड़ देवे या जो ख़ुद
बख़ुद खिंचाव ज़ियादा मालूम होता होवे और उसकी
बरदाश्त न कर सके या कुछ तकलीफ़ या ख़ौफ़
मा होवे तो भी वक़्त अभ्यास छोड़ कर उठ

खड़ा होवे और फिर थोड़े अरसे बाद अभ्यास करे ताकि आहिस्ता २ उस हालत की बरदाश्त हो जावे और बाद अभ्यास के कुछ काम काज भी करता रहे जिस से बदन और इंद्रियाँ शिथिल और सुस्त न होने पावें ॥

१४१–जो किसी अभ्यासी का वक्त ध्यान या भजन के कोई हिस्सा बदन का सुन्न यानी सुस्त या बेकार हो जावे तो जानना चाहिये कि उस से अभ्यास दुरुस्त बनता है ऐसी हालत को देख कर खौफ़ और वहम न करना चाहिये बाद अभ्यास के आहिस्तगी के साथ उठकर दस पाँच मिनिट चिहलक़दमी करे सुस्ती बदन की रफ़ा हो जावेगी ॥

१४२–जब भजन या ध्यान मैं बिशेष रस या आनन्द मिलने से अभ्यासी की तबीअत मैं मस्ती और बेपरवाही और संसार के भोग बिलास और कारस्वाई की तरफ़ से किसी क़दर नफ़रत पैदा होवे तो लाज़िम है कि ऐसे जोश की हालत मैं किसी चीज़ या काम या रोज़गार या कुटुंब परिवार का जल्दी से त्याग न करे और इस जोश को पक्का और ठहराऊ न थोड़े दिन मैं आहिस्ता २ हज़म हो जावेगा यानी साधारन हो जावेगा और फिर अपने त्याग वग़ैरह पर पछताना पड़ेगा इस वास्ते इस मामले मैं निहायत एहतियात के साथ बरताव करना लाज़िम है और उस जोश को जिस क़दर मुमकिन होवे जब्र

करना और दुनियादारों की नज़र से छिपाना मुनासिब है ॥

१४३–और अभ्यासी को ऐसे जोश की हालत में अपने तईं पूरा मानना या अपना सब काम पूरा बन जाना समझना नहीं चाहिये नहीं तो रास्ता आइंदा की तरक़्क़ी का बन्द हो जावेगा और जो हालत कि पैदा हुई है वह भी रफ़े २ साधारन हो जावेगी और फिर अपनी कसरें मालूम पड़ेंगी और यह भ्र (पूरे मानने की) ग़लत हो जावेगी ॥

१४४–अभ्यासी को हर हालत में मुनासिब है कि अपनी कसरों पर नज़र रक्खे और दीनता न छोड़े और जब तक कि त्रिकुटी और दसवें द्वार में न पहुँचे तब तक जो कुछ कि हालत मस्ती और बेपरवाही की उस पर गुज़रे और ज़ियादा से ज़ियादा आनंद प्राप्त होवे उसको पायदार और मुस्तक़िल न समझे और दिन २ अभ्यास में तरक़्क़ी करे और ऊँचे से ऊँची चढ़ाई पर नज़र और इरादा रक्खे और देह और इंद्रियों से थोड़ा बहुत काम काज करता रहे जिस में रूह की धार का चढ़ाव और उतार बराबर जारी रहे और तरक़्क़ी भी होती रहे इस तरह एहतियात के साथ अभ्यास करने से काम पूरा और दुरुस्त बनेगा और नहीं तो मस्ती और बेपरवाही ग़ालिब हो जावेगी और दुनियाँ और देह के काम में बहुत हर्ज वाक़ा होगा और फिर अभ्यास और

उसकी तरक्क़ी में भी ख़लल पड़ेगा और वह हालत मस्ती की भी एक रस क़ा नहीं रहेगी और शायद कि तनदुरुस्ती में भी किसी न किसी तरह का ख़लल वाक़ा होवे ॥

१४५- ते दुरुस्ती से जारी रहने कारखाई अभ्यास के और ज़ब्त करने जोश मस्ती के अभ्यासी को मुनासिब है कि संत सतगुरु या साधगुरु या प्रेमी अभ्यासी से जो अपने से ज़ियादा दरजे का है मेल और उनके सतसंग में वक्तन फ़वक्तन चंद रोज़ के वास्ते शामिल होना ज़रूर जारी रखे उनकी सोहबत और बचनों से इसको अपनी हालत की ख़ामी मा होती रहेगी और आनंद और सरूर का नशा जो इस को वक्तन फ़वक्तन अभ्यास में हासिल होगा नामुनासिब तौर पर बढ़ने नहीं पावेगा और वे हर तरह से अंतर और बाहर मदद देकर इसको जल्द-बाज़ी और मस्ती और दूसरे नुक़सान वग़ैरह से बचाते रहेंगे और दिन २ इसको तरक्क़ी में मदद देंगे ॥

१४६—राधा मी मत के अ सियों को चाहिये कि भजन और ध्यान और धुन के साथ सुमिरन जिस क़दर बन सके करें और इन में से जिस अभ्यास में मन ि ादा रुजू होवे उसी को ज़ियादा देर तक करें और जिस में मन कम लगे उस को कम करें ॥

जो भ में ज़ियादा मन लगे और सुमिरन और ध्यान की तरफ़ तवज्जह कम होवे तो भजन

ज़ियादा करैं और जो दिल चाहे ते थोड़ा ध्यान भी क़िसी वक्त़ करैं ॥

१४७–और सुमिरन नाम का धुन के साथ उस वक्त़ करैं कि जब मन भजन और ध्यान मैं न लगे नहीं तो कुछ ज़रूर नहीं है दिल चाहे तब थोड़ा या बहुत करैं ॥

१४८–लेकिन जो सतसंग प्राप्त नहीं होवे ते थोड़ा पाठ बानी और बचन का समझ २ कर नेम के साथ हर रोज़ करैं यह किसी क़द्र सतसंग का फ़ायदा देगा और इस से होशियारी और लगन जागनी रहेगी ॥

१४९–जो थोड़ी बहुत खटक अपने जीव के कल्यान की दिल में रही आवेगी और थोड़ा बहुत अभ्यास और पाठ नेम के साथ जारी रहेगा ते राधास्वामी दयाल जब २ और जिस तरह मुनासिब स गे ज़रूर उस अभ्यासी पर दया फ़रमाते रहैंगे इस तरह एक दिन ज़रूर जीव का कारज बन जावेगा ॥

१५०–जब कभी अभ्यास में रस और आनंद न आवे ते समझना चाहिये कि किसी ओछे करम का चक्कर है ऐसे वक्त़ मैं मुनासिब तो यह है कि ज़ोर देकर मुवाफ़िक़ मामूल अभ्यास करे चाहे रस आवे या नहीं और जो ऐसा न बन सके ते अभ्यास थोड़ा करे और उस रोज़ तवज्जह के साथ पाठ ज़ियादा करे और ख़ास कर चितावनी और प्रेम और चढ़ाई के शब्दौं को पढ़े ॥

१५१–ऐसी हालत में ज़ियादा घबराना या निरास होना नहीं चाहिये बल्कि ओछे करम के चक्कर को जल्द काटने के लिये कुछ परमार्थी काररवाई जो बन सके तो मामूल से थोड़ी ज़ियादा करनी चाहिये ॥

१५२–हर हालत में मेहर और दया का भरोसा रखना चाहिये, जब कि दुनिया में कोई शख़्स किसी की मेहनत और हाज़िर बाशी का एवज़ाना नहीं रखता है तो कुल मालिक राधास्वामी दयाल अपने भक्त की सेवा किस तरह ख़ाली रक्खैंगे ॥

१५३–कभी २ अभ्यास का रस न मिलने में भी कुछ मसलहत है यानी जो कोई दिन कुछ रस नहीं मिला या कम मिला तो आगे ज़ियादा मिलने की उम्मेद है या कोई दूसरा फ़ायदा जैसे मन की गढ़त और स बूझ और प्रीत और प्रतीत पक्की करना और बढ़ाना वग़ैरह मुतसव्वर है ॥

१५४–इस वास्ते घबराकर या निरास होकर अभ्यास को छोड़ना नहीं चाहिये और न राधास्वामी दयाल की तरफ़ से बेपरतीत होना, बल्कि अपने मन और इंद्रियों के हाल और चाल पर ग़ौर से नज़र करना चाहिये कि कुछ न कुछ उनकी र के ब से अभ्यास का रस नहीं मिला और उस कसर के दूर करने का जतन दया का बल लेकर करना चाहिये ताकि विघन जल्दी दूर हो जावे और आइंदा को ख़लल न डाले ॥

१५५–और अभ्यासी को मुनासिब है कि जो कोई सतसंगी अपने से ज़ियादा दरजे और ज़ियादा तजरुबे का होवे उससे हाल अपना कह कर सलाह और मदद लेवे उस से भी कुछ फ़ायदा होगा और तबीयत को ताक़त आवेगी ॥

१५६–अभ्यासी को इस क़दर एहतियात ज़रूर चाहिये कि भोगों की चाह और तरंग कम उठावे और उन में ज़रूरत के मुवाफ़िक़ बर्ताव करे क्योंकि जो इंद्रियों के भोग में ज़ियादती के साथ बर्ताव रहेगा तो भजन में मन कम लगेगा और रस आवेगा॥

१५७–इस वास्ते अभ्यासी सतसंगी को चाहिये कि जब तब चितावनी और वैराग और भक्ती और प्रेम के शब्दों का पाठ करता रहे और जब मन बेफ़ायदा और फ़ुजूल तरंगें उठावे तब उनको जहाँ तक मुमकिन होवे रोके और हटावे और मन में शरमावे और पछतावे और प्रार्थना करे, आहिस्ता २ हालत बदलेगी ॥

१५८–इस काम में जल्दी करना मुनासिब नहीं है क्योंकि यह मन जुगान जुग और जन्मान जनम से भूला हुआ और भरमा हुआ है और शुरू से इसका झुकाव संसार और भोगों की तरफ़ हो रहा है सो आहिस्ता २ इसका स्वभाव बदलेगा और अंतर में मुख मुड़ेगा दया राधास्वामी दयाल की शामिल हाल है लेकिन वह भी आहिस्ता २ काररवाई करेगी,

क्योंकि एक दम हालत बदलने में पूरा और ठहराऊ फ़ायदा नहीं होगा ॥

१५९—और सतसंगी ासी को यह भी ख़याल ना चाहिये कि राधास्वामी मत का मतलब मन और सुरत के समेटने और चढ़ाने का है सो जिस तरह यह काम आसानी से हो सके (यानी जिस अभ्यास में मन ज़ियादा लगे वही जतन करना चाहिये) और दिल में शौक़ देखने रोशनी और चमत्कारों का या हासिल होने सिद्धी और शक्ती का नहीं रखना चाहिये क्योंकि जो इस क़िस्म की आसा मन में रही तो अभ्यास में निर्मल रस नहीं आवेगा इस वास्ते मुना ि है कि भजन के वक़्त शब्द की तरफ़ और ध्यान के वक़्त स्वरूप और ु ाम की तरफ़ (चाहे कुछ नज़र आवे या नहीं) तवज्जह रक्खे और गुनावन किसी क़िस्म की न उठावे तो थोड़ा बहुत रस मन और चित्त के एकाग्र होने से ज़रूर मिलेगा और इसी का नाम निर्मल रस है और जब मौज से रोशनी वग़ैरह या कोई और कैफ़ियत नज़र आवे तो उसको देखे मगर मन अपना उस में न बाँधे और न ख़ाहिश इस बात की रक्खे कि र वही रोशनी या कै ़ त नज़र आवे नहीं तो शब्द और स्वरूप और मुक़ाम की तरफ़ से तवज्जह किसी क़दर हट जावेगी और अभ्यास में जैसा चाहिये नहीं लगेगा और ऐसा ख़याल दिल में पैदा होगा कि हम

को कुछ हासिल नहीं हुआ या हमारी तरक्क़ी नहीं होती है या कि हम पर कुछ दया नहीं है और फिर अनेक तरह की गुनावनें भी पैदा होकर मन को अभ्यास की तरफ़ से ढीला कर देंगी॥

१६०–जो लोग कि राधास्वामी मत में शामिल हैं और सच्ची चाह अपने जीव के सच्चे उद्धार और सच्चे मालिक के दरशनों की उस के निज धाम में पहुँचकर ते हैं उनको मुनासिब है कि वास्ते तरक्क़ी अपने अभ्यास के और दुरुस्ती चाल चलन परमार्थी और भी संसारी, ब्यौहार के नीचे के लिखे उन क़ायदों के मुवाफ़िक़ जिस क़दर बन सके काररवाई करते रहैं और जो वे इन क़ायदों को अच्छी तहर समझ कर उन पर नज़र र गे तो उम्मेद है कि उनको अपनी कसरें और भूल चूक मालूम हो जावेंगी और फिर उनकी सम्हाल का जतन भी वे दुरुस्ती से कर गे॥

१६१–और वह क़ायदे यह हैं–

पहिला–जो कि सुरत ऊँचे म यानी राधास्वामी दयाल के चरनों से उतर कर पिंड में आँखों के मुक़ाम पर ठहरी है और वहीं बैठकर इंद्रियों के द्वारे काररवाई देह और दुनया की कर रही है सो इसको राधास्वामी को जुगत के मुवा . अपने निज घर की तरफ़ उलटाना॥

दूसरा–गुरू स्वरूप या .ामी स्वरूप का ध्यान

करके मन और सुरत को ऊँचे देश मैं चलाना और ठहराना ॥

तीसरा—परमार्थ और स्वार्थ मैं जीवौं के साथ इस तरह बरताव करना जैसा कि यह शख़्स अपने साथ औरौं से बरताव चाहता है ॥

१६२—इन क़ायदौं के मुवाफ़िक़ बर्ताव मैं जो बिघन या दिक़्क़त वाक़े होती हैं उनका थोड़ा सा ज़िक्र और हटाने का जतन आगे लिखा जाता है उसका ख़याल हर एक सच्चे परमार्थी को जिस क़दर बन सके ना और उस जतन को काम मैं लाना मुनासिब है क्योंकि जो इस क़दर एहतियात और होशियारी नहीं की जावेगी तो उन क़ायदौं के मुवाफ़िक़ बर्ताव बनेगा और इस सबब से परमार्थी तर ़ी मैं भी किसी क़दर कसर पड़ेगी ॥

१६३—पहिले क़ायदे के मुवाफ़िक़ बरताव करने में यानी सुरत और मन की चढ़ाई में संसारी चाहें और तरंगें और इंद्रियाँ बिघन डालती हैं यानी यह सुरत की धार को सिमटने और ऊपर की तरफ़ को चढ़ने से रोकती हैं क ाँकि जब धार का रुख़ इंद्रियौं के द्वारा बाहर पदार्थों में या देह में नीचे की तरफ़ हुआ तब उसका ु ऊपर की तरफ़ मोड़ना और चढ़ाना मुश्कि होगा इस वास्ते अभ्यासी को मुनासिब है कि आम तौर पर ज़रूरत के मुवाफ़िक़ बाहर मुख कामौं और पदार्थौं में बरताव करे और ख़ास तौर

पर . ास के मन और इंद्रियोँ को रोक कर और सुरत की धार को समेट कर अपने अंतर में ऊँचे की तरफ़ आहिस्ता २ चलाने की आदत करे जो इस तौर पर कारवाई की जावेगी तो थोड़ा बहुत रस और आनंद सिमटाव और चढ़ाई का मिलेगा और फिर इसी तरह कारवाई जारी रखने और उस को आहिस्ता २ बढ़ाने से ज़ियादा रस मिलेगा और देह और इंद्रियोँ की तरफ़ से किसी क़दर हटाव होता जावेगा और जो इस कारवाई में मन और इंद्रियाँ संसारी तरंगेँ उठाकर ख़लल डालेंगी तो यकसाँ रस नहीँ मिलेगा यानी अभ्यास में कभी आनंद और कभी रूखा फीका पन रहेगा और उसी क़दर सुरत की चाल भी निज घर की तरफ़ सुस्त रहेगी ॥

१६१—जो कोई अपने मन और इंद्रियोँ की हर निगहबानी और चौकीदारी करता रहेगा और फ़ुज़ूल तरंगेँ और ख़ाहिशोँ को उठने से रोकता रहेगा तो वह अभ्यास के समय भी उन की थोड़ी त सम्हाल कर सकेगा नहीं तो अभ्यास के वक़्त अनेक तरह के गुनावन और ख़याल पैदा होंगे और अभ्यासी को उनकी ख़बर भी नहीँ होगी यानी उसका बजाय भजन और ध्यान के अनेक ख़यालों में बहता रहेगा । इस वास्ते मुनासिब और लाज़िम है कि ि क़दर हो सके अभ्यास के वक़्त मन और इंद्रियोँ की रोक और सम्हाल ज़रूर की जावे ताकि

थोड़ा ु त रस भजन और ध्यान का मिलता रहे और फिर में आहिस्ता २ तरक्क़ी भी होती जावे ॥

१६५—दूसरे क़ायदे के बरताव में इस क़दर एहति-यात चाहिये कि वक्त़ ध्यान और भजन के पहिले स्वरूप का ख़याल करके उस को अपने सन्मुख रक्खे तो मन और इन्द्री जो कि स्वरूप में लगने की आदत रखते हैं किसी क़दर निश्चल होकर स्थान पर ठहरेंगे या शब्द में लग जावेंगे और उस वक्त़ दूसरी सूरतों का ख़याल कम आवेगा और शब्द भी साफ़ सुनाई देगा और जो स्वरूप को नहीं लिया जावेगा तो अपने स्वभाव के मुवा़ि और इंद्री अनेक ख़याल यानी गुनावन में अक्सर ल रहेंगे ॥

१६६—जब कि ध्यान के वक्त़ थोड़ा बहुत स्व नज़र आ जावेगा या भजन के शब्द साफ़ सुनाई देगा तो मन और सुरत उस में बे तकल्लुफ़ लग जावेंगे और दूसरा ख़याल नहीं वेंगे लेकिन जिस वक्त़ कि ु का ज़ोर होगा उस वक्त़ स्वरूप को थोड़ा ज़ोर देकर ख़ से सन्मुख रखने में ु ावन हट जावेगी और जो गु न कम न होवे तो किसी शब्द के प्रेम की भरी हुई कड़ियों के स प के सन ु गाने या बतौर आरती के पाठ करने से ु त फ़ायदा होगा ॥

१६७— ु स्वरूप के ध्यान की और उसको सन ु

रखने की महिमा इस सबब से ज़ियादा है कि उस का ख़याल करते ही मन और इन्द्री परमार्थी यानी के घाट पर आ जावैंगे और तब भजन और ध्यान का रस ज़ियादा मिलेगा और गुनावन बहुत कम पैदा होगी। लेकिन यह बात तब दु बनेगी जब कि अभ्यासी को गुरु स्वरूप मैं गहिरा परमार्थी भाव और प्यार होगा इसी ब से राधा मी दयाल ने अपनी बानी और बचन मैं गुरु भक्ती पर ज़ियादा ज़ोर दिया है यानी प्रथम गुरु चरनन मैं प्रेम पैदा करने के वास्ते ज़ोर देकर हिदायत की है॥

१६८—मालूम होवे कि बग़ैर तीव्र बैराग के संसार और भोगों की तरफ़ से और बग़ैर गहिरे प्रेम और अनुराग के राध मी दयाल के चरनों मैं मन और सुरत शब्द में जैसा कि चाहिये नहीं लग सक्ते और वक़ भजन के गुनावन और तरंगें बहुत उठती रहैंगी। लेकिन जो अभ्यासी को गुरु स्वरूप में भाव और प्यार है तो उस को अगुवा यानी ख़याल से सन्मुख रखने से मन किसी क़दर निश्चल हो सक्ता है क्योंकि साकार स्वरूप मैं प्यार करने की उस को आदत है और गुरु स्वरूप के सन होने पर उसके मन और इन्द्री दर्शन और बचन मैं लग कर फ़ौरन परमार्थी घाट पर आ जाते हैं और संसारी ख़याल हट जाते हैं। और दूसरा फ़ायदा यह है कि गुरु स्वरूप को संग लेने मैं अभ्यासी

को मिस्ल मुक़ामी स्वरूप के स्थान २ पर उस को बदलने की ज़रूरत न होगी यानी वही गुरु स्वरूप उस को सत्तलोक तक (जहाँ तक कि साकार रचना है) दरजे बदरजे सूक्षम होता हुआ पहुँचा देगा और अभ्यासी का भी स्वरूप इसी तरह बदलता जावेगा ॥

१६९–जो कोई मुक़ामी स्वरूप के आसरे चलेगा तो भी यही फ़ायदा हासिल हो सक्ता है बशर्ते कि वह स्थान २ पर थोड़ा बहुत प्रगट होता जावे और जो प्रगट होने में कुछ देरी हुई या कसर रही तो उस रूप में ख़याल से ध्यान करने में वैसा प्यार नहीं आवेगा जैसा कि गुरु स्वरूप में आ सक्ता है और इस सबब से गुनावन यानी मन की चंचलता जल्दी कम या दूर न होवेगी और रस भी कम आवेगा। अब अभ्यासी को चाहिये कि अपने शौक़ और हालत को परख कर जिस तरह उसको फ़ायदा ज़ियादा मालूम पड़े उसी तरह अपने ध्यान को सम्हाल करे क्योंकि [illegible]र ध्यान के मन और सुरत का सिमटाव जैसा कि चाहिये जल्दी न होवेगा। अ[illegible]त्ता जिस किसी को शब्द खुल जावे उसको इस क़दर [illegible]त ध्यान पर ज़ोर देने की नहीं होगी। ले[illegible] ऐसा हाल कुल अभ्यासियों का नहीं हो[illegible]ता किसी बिरले उत्तम अधिकारी की ऐसी हालत

होवेगी इस वास्ते अभ्यासियों को अव्वल ध्यान पर ज़ियादा ज़ोर देना मुनासिब और ज़रूर है ॥

१७०–मालूम होवे कि गुरु स्वरूप का दर्शन ऊँचे के मुक़ाम पर खिंच कर होता है और मुवाफ़िक़ और दुनिया की सूरतों के जब ख़याल करो उस . यह स्वरूप प्रगट नहीं हो सकता यह स्वरूप अंतरजामी पुरुष आप दया करके अपने भक्त की प्रीत और प्रतीत बढ़ाने के वास्ते धारन करता है और ऊँचे देश में प्रगट होकर दर्शन देता है। इसी सबब से अकसर इस स्वरूप का दर्शन स्वप्न अवस्था में जब कि मन और सुरत का ज़ियादा खिंचाव हो जाता है होता है और अभ्यास के वक़्त कभी २ ऐसी दया होती है। इस वास्ते अभ्यासी को जब कभी गुरु स्वरूप को दर्शन अभ्यास के वक़्त या स्वप्न अवस्था में होवे तो उसको ख़ास दया मालिक की समझना चाहिये और उसी स्वरूप को चित में धारन करके अभ्यास के वक़्त उसका ध्यान करना चाहिये ॥

१७१–तीसरे क़ायदे के मुवाफ़िक़ बरताव करने से अभ्यासी प्रेमी को उसकी परमार्थी काररवाई और संसारी ब्यौहार में बहुत फ़ायदा हासिल होवेगा यानी उसके हाथ से किसी को किसी क़िस्म की तक-लीफ़ या दुख नहीं पहुँचेगा और जो कि परमार्थियों को हिदायत है कि जहाँ तक बन सके या मुनासिब होवे परमार्थी जीवों के साथ दीनता और प्यार

और दया भाव के साथ बर्ताव करैं और आम जीवौं
के साथ दया भाव ँ तो इस तरह बर्ताव करने
से की प्र ता हासिल होगी और मालिक भी
प्र होकर भक्ती और प्रेम की बख़शाइश करेगा
और दिन २ हालत बदलती जावेगी और झगड़े
रगड़े और इर्षा और बिरोध वग़ैरह परमार्थी की
ई में बिघन नहीं डालैंगे और हिरदा उसका
दिन २ शुद्ध और कोमल होता जावेगा और मालिक
के चरनौं के प्रेम से भरता जावेगा ॥

१७२–जो परमार्थी का थोड़ा धन का नुक़सान भी
हो जावे और ड़ा रगड़ा. बिरोध हट जावे तो
ऐसे नुक़ की बरदाश्त करना मुनासिब है और
सख़्त सुस्त और तान के बचन को सहना और क्षमा
करके एवज़ न लेने मैं परमार्थी का ज़ियादा फ़ायदा
है बनिस्बत इसके कि ओछे और क्रोधी आदमियों से
मु. ला करना और तकरार बढ़ाना । खुलासा यह
कि परमार्थी को इस बात की एहतियात ज़रूर
चाहिये कि जिस मैं उसका मन संसारी मुआमलौं के
ब से चिंता में न पड़े और गदला और मैला न
होवे और भजन मैं इस क़िस्म के ख़्याल बिघन न
डालैं नहीं तो उसके रस और आनंद मैं भी फ़र्क़
पड़ेगा और यह हर्जा बनिस्बत और छोटे नुक़सान
या ज़रासी मन की तकलीफ़ के बहुत भारी है और

उ   । बचाव हर हालत मैं जहाँ तक मुमकिन होवे और मुनासिब मालूम पड़े ज़रूर करना चाहिये ॥

१७३–परमार्थी को चाहिये कि अपने मन और सुरत की धार को नौ द्वार यानी इंद्रियों के मुक़ाम से हटा कर दसवें द्वार की तरफ़ जो मस्तक में है (और जिस द्वारे से सुरत की धार पिंड में आकर नेत्रों में ठहरी है) संतो की जुगत के मुवाफ़िक़ शब्द और स्वरूप के आसरे उलटाना शुरू करे यानी पहिले परमार्थी रस लेने का ख़याल मन में उठाकर जो जुगत कि बताई गई है उसके मुवाफ़िक़ अभ्यास में बैठे तब उसके ख़याल के मुवाफ़िक़ जैसा वह तेज़ और मज़बूत होगा मन के स्थान से धार उठकर ऊँचे की तरफ़ रवाँ होगी और जिस क़दर कि वह चल कर रास्ते के स्थान पर ठहरेगी या उसी तरफ़ की गुनावन करती रहेगी उसी क़दर उस धार के ऊँचे देश के चेतन्य से मिलने का रस आवेगा ॥

१७४–यह रस बहुत निर्मल और साफ़ है और थोड़ी सी तवज्जह अंतर मैं करने से मिल सक्ता है। जब इस की थोड़ी बहुत कैफ़ियत मालूम होगी यानी मन को कुछ मज़ा आवेगा और उस के नशे और सरूर का रस मालूम पड़ेगा तब बार २ उसी रस के लेने के इरादे से अभ्यास करेगा और फिर यही हालत बढ़ती जावेगी यानी शौक़ और   दिन २ तरक़्क़ी करता जावेगा ॥

१७५–इस ते हर एक सच्चे र्थी को - सिब है कि जब २ फ़ुर्सत और मौक़ा मिले तब सच्ची तरंग अंतर में परमार्थी रस लेने की उठाकर अभ्यास शुरू करे और जैसे दुनिया के कामों में जब किसी काम का ख़याल करता है तो उस वक्त उसी का रूप हो जाता है और दूसरी बात की सुध नहीं रहती है इसी तरह अभ्यास के वक्त भी सिर्फ़ परमार्थी ख़याल को पक्का करके भजन या ध्यान करे और किसी दूसरे काम या बात का जहाँ तक - किन हो ख़याल न लावे तो ज़रूर थोड़ा रस अभ्यास में मिलेगा और फिर उसका शौक़ आहिस्ता २ बढ़ता जावेगा॥

१७६–सिवाय अभ्यास के वक्त के और वक्तों में भी चार पाँच मिनिट या ज़ियादा अपने चित्त को मुक़ाम और स्वरूप या शब्द का अंतर में ख़याल करके वहाँ जोड़ता रहे तो इतनी ही देर में कुछ रस मिलेगा और यही काररवाई जब २ ख़याल आजावे कई बार दिन और रात में करे और उस से फ़ायदा वे यानी रस लेवे तब थोड़ी बहुत ख़बर अंतर के आनंद की पड़ेगी और उसका शौक़ बढ़ेगा॥

१७७–जब ऊपर कही हुई काररवाई और मामूली अभ्यास से कुछ २ रस मिलेगा और राधास्वामी दयाल की दया और कुदरत थोड़ी बहुत नज़र आवेगी तब किसी क़दर प्रेम उनके चरनों में पैदा होगा

और दर्शनों का शौक़ बढ़ेगा और फिर अभ्यास भी ज़ियादा दुरुस्ती से बन पड़ेगा और रफ़्ते रफ़्ते उसके रस और आनंद का इस क़दर आधार हो जावेगा कि दिन रात में बग़ैर दो चार बार अभ्यास का रस लेने के चैन नहीं आवेगा और बिरह और शौक़ ज़ियादा होता जावेगा ॥

१७८—ऐसी करनी से दिन २ मेहर और दया भी बढ़ती जावेगी और उसके साथ प्रेम और करनी भी बढ़ती जावेगी और रफ़्ते २ एक दिन काम पूरा बन जावेगा ॥

१७९—पूरा २ एतबार सब तरह काररवाई और ब्यौहार में उस शख़्स का हो सक्ता है कि जिस के दिल में ख़ौफ़ अपने सच्चे कुल मालिक का यानी उसकी अप्रसन्नता और अपने परमार्थी नुक़सान का बसा हुआ है वह हर वक़्त और हर हालत में और हर एक से सच्चा बर्तैगा और उसका अंतर और बाहर यकसाँ होगा और जो कि दुनिया के ख़ौफ़ों के सबब से थोड़ी बहुत दुरुस्ती के साथ अपना ज़ाहिर बनाये हुए रखते हैं उनका वक़्त कम होने उन ख़ौफ़ों के पूरा एतबार और भरोसा नहीं किया जा सक्ता है क्योंकि उस वक़्त वे अपने अंदरूनी ख़यालात के बमूजिब बे-धड़क और बेख़ौफ़ बर्तने को तइयार हो जावेंगे ॥

१८०—सच्चे परमार्थी को अपने मन की चाल चलन और उसके ख़वासों को अपने अंतरी ख़यालात और

तरंगों से जाँचना चाहिये और जब तक कि अंतर में सफ़ाई न होवे और सच्चे मालिक और सतगुरु का ख़ौफ़ दिल में पैदा न होवे और परमार्थी नुक़सान के बचाने की पक्ष मन में न आवे तब तक अपने तईं गुनहगार और बिकारों से भरा हुआ समझ कर न उनके दूर करने का जैसा कि संतों ने फ़र । है करता रहे और जब तब चरनों में राधास्वामी दयाल और सतगुरु के प्रार्थना और फ़रियाद भी करता रहे उनकी मेहर और दया से आहिस्ता २ सफ़ाई होती जावेगी और उसी क़दर भजन का रस भी मिलता जावेगा कि जिस से शौक़ और प्रेम बढ़ता जावेगा ॥

१८१–इस में कुछ शक नहीं कि बग़ैर राधास्वामी दयाल की दया के जीव की ताक़त नहीं है कि अपने बल से यह काम कर सके लेकिन जो वह बचन सुनकर और समझकर सच्चा इरादा इस बात का करेगा कि बिकारों को दूर करके और प्रेम की दौलत हासिल करके एक दिन राधास्वामी दयाल के चरनों में पहुँच कर अमर और परम आनंद को प्राप्त होऊँ और जो कि राधास्वामी दयाल ने फ़रमाई है की काररवाई और अभ्यास थोड़ी बहुत प्रीत और प्रतीत के साथ शुरू करेगा और अपने मन और इंद्रियों की थोड़ी बहुत सम्हाल और निगहबानी शुरू कर देगा तो मालिक राधास्वामी दयाल

अपनी दया से उसको मदद देते जावेंगे यानी आहिस्ता २ उसका प्रेम बढ़ाते जावेंगे और एक दिन निर्मल करके अपने चरनों में बासा देवेंगे ॥

१८२–जिस क़दर कि प्रेम राधास्वामी दयाल के चरनों का बढ़ता जावेगा उसी क़दर मन और सुरत सिमट कर अंतर में चढ़ते जावेंगे और बिकारी अंग और जितने कि फ़ुज़ूल ख़याल और तरंगें हैं वह सहज में आपही झड़ते जावेंगे और दिन २ सफ़ाई होती जावेगी और एक दिन काम पूरा बन जावेगा ॥

१८३–राधास्वामी मत में बाहर सतसंग और र में अभ्यास सुरत और मन के ऊँचे देश की तरफ़ चढ़ाने का कराया जाता है और भेद कुल मालिक के निज धाम का जो कि सुरत का निज देश है और भी रास्ते की मंज़िलों का समझाया जाता है कि जिस से अभ्यासी रास्ते में कहीं न अटके और हर एक मुक़ाम को तै करता हुआ धुर धाम में पहुँच कर राधास्वामी दयाल का दर्शन और उनके चरनों में बासा पावे ॥

१८४–जो कि राधास्वामी मत के सतसंगी कुल मालिक राधास्वामी दयाल का इष्ट बाँधकर और उनके चरनों की सरन दृढ़ करके उनके निज धाम में पहुँचने की आसा रखते हैं और उसको दिन २ बढ़ाते और मज़बूत करते जाते हैं और जिस क़दर जिस किसी से बन सक्ता है उसी मुवाफ़िक़ रोज़मर्रा

अभ्यास सुरत और मन के उसी तरफ़ के चढ़ाने का करते हैं इस वास्ते उनके मन में तड़प और बेकली ऊँचे देश की तरफ़ चलने और चढ़ने की बराबर लगी रहती है ॥

१८५–सुरत शब्द जोग का अभ्यास असल में जीते जी मरने का अभ्यास है यानी जैसे कि सुरत अख़ीर वक़्त पर पैरों से आँखों तक खिचती हुई मालूम होती है ऐसे ही जीते जी अभ्यास के समय उसका खिचाव और सिमटाव होता जाता है ॥

१८६–और जिस क़दर कि सुरत ऊँचे देश की तरफ़ चढ़ती जाती है उसी क़दर संसार और संसार के भोगों और पदार्थों की तरफ़ से नफ़रत होती जाती है और इन्द्रियों के रस फीके पड़ते जाते हैं और निज घर की तरफ़ चलने और चढ़ने की चाह बढ़ती जाती है और जब दया से शब्द साफ़ और रसीला सुनाई देता है या कुछ परकाश और नूर नज़र आता है तब प्रेम और उमंग वास्ते प्राप्ती दर्शन और ज़ियादा चढ़ाई के बढ़ता जाता है और उसी क़दर अभ्यास के समय देह सुन्न होती जाती है और इस तरफ़ का होश होता जाता है ॥

१८७–और जिस क़दर कि मन और सुरत सिमट कर उमंग के साथ घट में चढ़ते हैं उसी क़दर शब्द और रूप का रस और आनंद मिलता है और उसके साथ शौक़ और उमंग भी ज़ियादा और दुनिया के

ख़याल यानी गुनावन कम और दूर होती जाती हैं और मन निश्चल और चित्त निर्मल होता जाता है ॥

१८८—राधास्वामी मत में सब से भारी संजम शौक़ और प्रेम का है और जब यह थोड़ा बहुत दिल में पैदा हुआ और अभ्यास कर के थोड़ा बहुत रस और आनंद पाकर बढ़ने लगा तो दिन २ अभ्यास की तरक्क़ी होती जावेगी और दर्शनों के प्राप्ती की आशा और प्रतीत मज़बूत हो जावेगी ॥

१८९—मालूम होवे कि जिस क़दर मन और सुरत को रस और आनंद अंतर में मिलता जाता है उसी क़दर चित्त संसार के भोगों और पदार्थों से हटता जाता है और ख़ाहिश और चाह संसारी कम होती जाती है और शौक़ दर्शन का बढ़ता जाता है और बंधन देह और दुनिया के भी ढीले होते जाते हैं ॥

१९०—जब कि इस तरह अभ्यास करके मन और सुरत का झुकाव और खिंचाव घट में ऊपर की तरफ़ को होने लगा तब अख़ीर वक़्त पर जब कि सुरत सर्व अंग करके पिंड को छोड़कर ऊपर की तरफ़ कुदरती तौर पर खिंचेगी उस वक़्त अभ्यासी को किस क़दर आसानी अपने घर की तरफ़ चलने की होवेगी और कैसा भारी रस और आनंद खुलने शब्द का और नज़र आने दर्शन का मिलेगा कि जिस को पाकर सुरत निहायत उमंग के साथ ऊपर को चढ़ेगी और जहाँ सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु

मुनासिब समझैंगे उसको ऊँचे और सुख स्थान में बासा देवैंगे ॥

१९१–यह हाल गहिरे अभ्यासियों का होगा और जो कम दर्जे के अभ्यासी हैं की भी सुरत उसी तरह शब्द और स्वरूप की मदद पाकर र की त को उमंग के साथ अखीर वक्त पर मा से ज़ियादा चढ़ेगी और सुख स्थान में यानी सहसदल ल और उसके ऊपर बासा पावेगी और जो ज़ियादा दरजे के अभ्यासी हैं वह अपने दर्जे के मुवाफ़िक़ त्रिकुटी में या दसवें द्वार में और जो अव्वल दर्जे के हैं वह सत्तलोक और राधास्वामी पद में बासा पावैंगे ॥

१९२–खुलासा यह है कि सुरत शब्द जोग का अभ्यासी चाहे जिस दर्जे का होवे और जिसने सच्चे मन से राधास्वामी दयाल की सरन ली है वह सहस-दलकँवल के नीचे नहीं ठहरेगा, वह राधास्वामी दयाल की मेहर और संत सतगुरु की दया से इस के ऊपर और ऊँचे से ऊँचे मुक़ामों में अपनी र भक्ती के मुवाफ़िक़ दर्जे पाता हुआ एक दिन धुर धाम में पहुँच जावेगा और इसी का नाम पूरा उद्धार है ॥

१९३–हरचंद मन और माया और काल और करम गी की तरक्की मे अनेक तरह के बिघन डालते रहते हैं पर, ि किसी के हिरदे में सच्चा शौक़

अपने जीव के उद्धार का दया से पैदा हो गया है उसका रास्ता रोक नहीं सक्ते बल्कि कुछ अर्से के अभ्यास के बाद वही विघन अभ्यासी के मददगार हो जाते हैं और इस तौर पर राधास्वामी दयाल की दया से रास्ता सहज में तै हो जाता है ॥

१९४–कुल मालिक राधास्वामी दयाल इस क़दर अपने भक्तों पर जो सच्चे मन से सरन में आये हैं दया फ़रमाते हैं कि सिर्फ़ उन्हीं का नहीं बल्कि उनके निज कुटुम्बियों का भी जिस क़दर मुनासिब होता है उद्धार फ़रमाते हैं यानी उनसे अपने भक्त की सेवा लेकर या उसमें प्रीत लगाकर अख़ीर वक़्त पर उनके मन और सुरत को सहज में थोड़ा बहुत चढ़ाते हैं और चौरासी के चक्कर से बचा कर और फिर नर-देही में लाकर सतसंग और भजन वग़ैरह कराते हैं इस तरह उनके उद्धार का रास्ता जारी हो जाता है ॥

१९५–यह ख़ास दया किसी वक़्त में जीवों पर नहीं हुई जो कि अब कुल मालिक राधास्वामी दयाल ने संत सतगुरु स्वरूप धारन करके जीवों पर आप फ़र्माई है कि जिस किसी ने सच्चे मन से उनके चरनों में थोड़ी बहुत भक्ती करी तो उसका और भी उसके निज रिश्तेदारों का बल्कि नौकरों तक का दर्जे बदर्जे उद्धार फ़रमाते हैं ॥

१९६–मादे का ख़वास है कि जिस तरफ़ एक दफ़े रवाँ होवे तो बार २ उसी तरफ़ को वक़्त मुक़र्ररः

पर रुजू करता है जैसे एक बार मुसहिल लिया जावे या फ़स्द खोली जावे तो माद्दा या खून उसी तरफ़ को वक्त मुक़र्रर: पर बारंबार रुजू करता है फिर सुरत और मन जिनका निज घर ऊँचे देश में है अख़ीर वक्त पर जब कि कुदरती खिंचाव अंदर में पसारे का ऊपर की तरफ़ को होगा किस तरह और तरफ़ को जा सक्ते हैं पर शर्त यह है कि मन और सुरत में चाह और आसा अपने घर में जाने और अपने मालिक से मिलने की पैदा होकर जिस क़दर मुमकिन होवे जीते जी मज़बूत हो जावे ॥

१९७–जो घर का भेद नहीं मिला और जीते जी उस रास्ते पर चलना शुरू नहीं किया और आसा और बासना देह और संसार और उसके भोगों और पदार्थों में रही तो वह मन और सुरत ज़रूर अपनी चाह और करनी के मुवाफ़िक़ सहसदलकँवल के नीचे जो सुन्न है उस में ग़ोता लगाकर फिर नीचे की तरफ़ उतर कर किसी न किसी देश और जोन में बासा पावेंगे यानी फिर जनमेंगे और शरीर धारन करेंगे ॥

१९८–जो करनी अच्छी है तो स्वर्गादिक और मृत्यु लोक में नरदेही पावेंगे और सुख भोगेंगे और जो नाक़िस करनी है तो नीचे देश और नीची जोनी में भरमेंगे ॥

१९९–जिस वक्त कि सुरत छठे चक्र के पार सुन्न में

जाती है उस वक़्त देह और दुनिया की काररवाई की याद भूल जाती है लेकिन थोड़े अरसे बाद जो ज़बर वासना है उसकी फ़ुरना होती है और उसी के मुवाफ़िक़ उस सुन्न से जहाँ वासा मिलैगा उस धार पर जो उस देश या जोन से मिली हुई है सवार होकर उतर जाती है ॥

२००–इस उतार का सबब यह है कि उस सुरत और मन का रुख़ ज़िन्दगी में नीचे की तरफ़ रहा और भोगों की आशक्ती करके धार उसी तरफ़ को हमेशा जारी रही सो उसी स्वभाव और बासना के मुवाफ़िक़ मरने के बाद भी खींच कर नीचे के देश और जोन में ले जाती है ॥

२०१–इस वास्ते हर एक जीव को चाहे औरत होवे या मर्द मुनासिब और लाज़िम है कि इसी ज़िन्दगी में अपने निज घर और रास्ते का भेद और जुगत चलने की संत सतगुरु या उनके प्रेमी सेवक से दरियाफ़्त करके जिस क़दर बन सके उस रास्ते पर चलना शुरू करे और कुछ रस और आनंद अंतर में पाकर आसा और चाह अपने निज घर में पहुँचने और अपने सच्चे पिता कुल मालिक राधास्वामी दयाल के दर्शन के प्राप्ती की मज़बूत बाँधे तो अलबत्ता उसको संत सतगुरु की दया से ऊँचे देश में वासा मिलेगा और जब तक कि धुर धाम में नहीं पहुँचेगा तब तक एक दो या तीन जनम धारन करके

और वही त कमा ऊँचे से ऊँचे देश में बासा पावेगा और हर एक जनम पहिले जनम से बेहतर होगा और संत सतगुरु भी हर जनम में मिलैंगे ॥

२०२–राधास्वामी मत के हर एक सतसंगी को मुनासिब है कि ि क़दर अ स बन सके राधास्वामी दयाल की सरन लेकर हर रोज़ बिला नाग़ा करता रहे और सतसंग करके चरनौं में प्रीत और प्रतीत बढ़ाता जावे और शक और शुभा या किसी तरह का संदेह मन मैं न रक्खे तो राधास्वामी दयाल मेहर से अपना देकर जिस क़दर करनी मुनासिब और ज़रूर है कराकर एक दिन निज घर में पहुँचा दैंगे कि जहाँ सुरत परम आनंद को प्राप्त होगी और ज मरन के दुख और देहियोँ के कष्ट और कलेश से बिलकुल छुटकारा हो जावेगा। इसी को पूरा उद्धार कहते हैं और जो कोई इस तरह अभ्यास जारी रक्खेगा वह और जोनौं में नहीं जावेगा यानी चौरासी का चक्कर उसका फ़ौरन कट जावेगा। इस बात मैं किसी को कभी शक और संदेह न लाना चाहिये ॥

सु ऊपर के बचनौं का।

२०३–यह दोबारा ज़ियादा खोल लिखी ी है कि जब किसी सतसंगी को शब्द न सुनाई दे या बिलकुल न सुनाई दे तो उसको चाहिये कि भजन के आसन से बैठ सुमिरन और ध्यान

करे और जब आवाज़ सुनाई देवे तब सु[illegible] मौक़ूफ़ करे और आवाज़ मैं चित्त लगावे और ध्यान भी करता रहे या उसको भी कम कर देवे या छोड़ देवे ॥

२०४–जब भजन के [illegible] गुनावन और [illegible] दुनिया के बहुत उठैं तब भी मुनासिब है कि सुमिरन और ध्यान थोड़ी देर के वास्ते उसी आसन से बैठे हुए करे और जब गुनावन हट जावे और आवाज़ थोड़ी बहुत साफ़ सुनाई देने लगे तब उस मैं चित्त को लगावे और सुमिरन छोड़ दे पर ध्यान जो बन सके तो करे जाय ॥

२०५–जिस किसी को एक मर्तबा शब्द साफ़ सुनाई देवे और फिर कुछ अरसे बाद गुप्त हो जावे तो जानना चाहिये कि उस शख़्स से (१) कोई काम नाक़िस बना या (२) कोई पिछले पाप करम का चक्कर आया हुआ है या (३) उसने गुप्त भेद राधास्वामी मत का या अपने अभ्यास की कैफ़ियत किसी ग़ैर शख़्स या सतसंगी के रूबरू ज़ाहिर कर दी । पहली और दूसरी सूरत मैं सतसंगी को चाहिये कि भजन के आसन से बैठ कर सुमिरन और ध्यान करे और जब तक शब्द प्रगट न होवे तब तक सिवाय सुमिरन और ध्यान मज़कूरः बाला के आध घंटा हर रोज़ धुन के साथ राधास्वामी नाम का सुमिरन करे इस तौर पर

कि हिरदे के ... पर राधास्वामी और फिर के ... ाम पर राधास्वामी और फिर तीसरे तिल या सहसदलकँवल के मुक़ाम पर राधास्वामी नाम का अंतरी या थोड़ी आवाज़ के साथ उच्चारन करे और इस सुमिरन के साथ ही हर मुक़ाम पर गुरू स्वरूप का ध्यान भी करे तो उम्मेद है कि राधास्वामी दयाल की दया से थोड़े अरसे में सफ़ाई मन और सुरत की हासिल होगी और पाप और नाक़िस ... आसानी से कट जावेंगे और फिर शब्द भी प्रगट हो जावेगा । और तीसरी सूरत में भी ऊपर की हिदायत मुवाफ़िक़ काररवाई करे और सिवाय उसके जबतब प्रार्थना चरनों में वास्ते माफ़ी अपने क़सूर के करता रहे और आइंदा के वास्ते एहतियात रक्खे कि बग़ैर हुजा ... किसी को भेद मत का न बतावे और अपने अभ्यास की हालत का ज़िकर किसी दूसरे सतसंगी से न करे ॥

२०६—सिर्फ़ स्त्रियों को इस क़दर इजाज़त है कि जो वे आप लिखना पढ़ना नहीं जानती हैं तो वह अपने ख़ाविन्द या दूसरे रिश्तेदार की मारफ़त अपने अभ्यास का हाल लिखवाकर इत्तिला कर सकती हैं और जो कोई मर्द लिखना पढ़ना नहीं जानता है और उसको अपने अभ्यास की हा ... की इत्तिला देना ज़रूर है और वह खुद सतसंग में उस वक़्त हाज़िर नहीं हो सक्ता है तो किसी दूसरे सतसंगी

की मारफ़त जिस से उसकी प्रीत है अपना हाल लिखवा कर बज़रीए ख़त के इत्तिला दे सक्ता है ॥

२०७—जो किसी सतसंगी को अभी शब्द नहीं खुला है या थोड़ा सा खुला है और सुमिरन ध्यान के वक़्त भी मन गुनावन बहुत उठाता है तो चाहिये कि सुमिरन छोड़ कर कोई प्रेम के शब्द या कड़ियों का अपने अंतर में पाठ करे या उसको गावे या कोई मानसी सेवा करे तो उम्मेद है कि गुनावन हट जावेगी और मानसी सेवा में आरती का गाना बेहतर होगा और जब गुनावन हट जावे तब बदस्तूर सुमिरन और ध्यान करे ॥

२०८—जिस सतसंगी का मन वक़्त भजन या सुमिरन और ध्यान के गुनावन बहुत उठाता है तो ना चाहिये कि उसका मन बहुत मलीन है और री ख़यालों और कामों में ज़ियादा मशग़ूल रहता है और फ़ुज़ूल ख़्वाहिशें उठाता है उसको चाहिये कि दुनिया के ख़याल और ख़्वाहिशें कम करे और वक़्त अपना संसारियों की सोहबत में फ़ुज़ूल ख़र्च न करे और धुन के साथ नाम का सुमिरन एक या दो मर्तबा कम से कम आध घंटा हर रोज़ करे तो कुछ अरसे में सफ़ाई हासिल होगी और भजन और ध्यान थोड़ा बहुत दुरुस्त बनने लगेगा ॥

२०९—अकसर लोग वक़्त अभ्यास के ख़्वाहिश देखने रोशनी और चमत्कार वग़ैरह की रखते हैं और जो

वह नज़र न आवे तो ख़्याल करते हैं कि हमारी तरक्क़ी नहीं है सो यह उनकी . ती है अभ्यास से मतलब सुरत और के सिमटाने और चढ़ाने का है और जो रोशनी और चमत्कार नज़र आवेगा वह मायक होगा और ठहरेगा नहीं इस वास्ते चाहिये कि जो कभी कुछ रोशनी और चमत्कार नज़र आ-जावे तो उसको देख लैं मगर ख़ाहिश उसके देखने की बार २ न करैं जो मन और सुरत उनके सिमट कर कुछ अरसे किसी स्थान पर शब्द और स्वरूप के आसरे ठहरैंगे तो थोड़ा बहुत रस और आनंद निरमल अभ्यास का प्राप्त होगा ॥

२१०-[किसी को वक़्त ास के आवाज़ बायैं कान की तरफ़ से आवे उसको मुनासिब है कि आवाज़ के सुनने मैं तवज्जह न करे और जो वह आवाज़ बन्द न होवे तो बायैं कान का दबाव हलका कर दे और जो इस पर भी वह आवाज़ जारी रहे तो बायैं जानिब का दबाव बिल्कुल छोड़ दे और अपनी तवज्जह मध्य मैं ऊपर की तरफ़ को रक्खे अगर इस तरकीब से भी आवाज़ बायैं जानिब की बन्द न होवे तो चाहिये कि भजन के आसन से बैठे हुए सुमिरन राधास्वामी नाम का ध्यान सहित इस तरह करे कि पहिले तीसरे तिल पर राधास्वामी नाम का . ान दिल से उच्चारन करे फिर सहसदल-कँवल और फिर त्रिकुटी के स्थान पर और इस

काररवाई को बराबर जारी रक्खे जब तक कि आवाज़ मध्य में या दाहिनी जानिब से न सुनाई देवे और अपने मामूली वक़्त तक अभ्यास कर के उठ खड़ा होवे ।

२११–और जिस किसी सतसंगी को सतसंग रोज़मर्रा नहीं मिल सक्ता है उसको चाहिये कि चार या पाँच शब्द का पाठ पोथी सारबचन नज़्म में से और आठ या दस बचन का पाठ पोथी सारबचन नसर में से समझ समझ कर और अपने हाल को मिलाकर रोज़मर्रा करे और जो हिदायत उसको मिले उसके मुवाफ़िक़ जहाँ तक मुमकिन हो काररवाई करने की राधास्वामी दयाल की दया का भरोसा रखकर कोशिश करे इस तरकीब से किसी क़दर फ़ायदा सतसंग का उसको प्राप्त होता रहेगा और अभ्यास में मदद मिलती रहेगी ॥

॥ ॥